Saras Sangraha
Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.
Agodha Singh

विश्व-साहित्य ग्रन्थमाला
(कविता-विभाग का तीसरा ग्रन्थ)

सरस संग्रह

SPS
891.431 A 97 S
10016

सम्पादक—

श्री अयोध्यासिंह उपाध्याय

प्रोफ़ेसर, हिन्दू-विश्वविद्यालय, काशी

Sri Pratap Singh
Public Library
Srinagar.

Mohar Chand Lachhman Das
BOOK SELLERS
LAHORE.

द्वितीयावृत्ति } फर्वरी १९३५ { मूल्य सजिल्द १२ आना

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Sarasa Sangraha
Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.
Ayodhya Singh

विश्व-साहित्य ग्रन्थमाला
(कविता-विभाग का तीसरा ग्रन्थ)

सरस संग्रह

SPS
891.431 A 97 S
10016

सम्पादक—
श्री अयोध्यासिंह उपाध्याय
प्रोफ़ेसर, हिन्दू-विश्वविद्यालय, काशी

Sri Pratap Singh
Public Library
Srinagar.

Mehar Chand Lachhman Das
BOOK SELLERS
LAHORE.

द्वितीयावृत्ति } फर्वरी १६३५ { मूल्य सजिल्द १२ आना

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

10016
10016
168

प्रकाशक—

विश्व-साहित्य-ग्रन्थमाला,
मैक्लेगन रोड, लाहौर ।

मुद्रक—

मलिक हरभगवानदास,
नवजीवन प्रेस, १२, मैक्लेगन रोड, लाहौर ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

परिचय

हिन्दी का कविता-साहित्य दिन-प्रति-दिन उन्नति कर रहा है। पिछेली ५ सदियों में बीसियों उच्च कोटि के हिन्दी-कवि हुए हैं। प्रायः सभी कवियों की चुनी हुई कविताओं के पृथक-पृथक संग्रह अब तक प्रकाशित हो चुके हैं। पिछली दशाब्दि में प्रतिनिधि-सत्तात्मक पद्य सग्रंह भी काफ़ी संख्या में निकल चुके हैं। इस दिशा में पं० रामनरेश त्रिपाठी का प्रयत्न विशेषरूप से प्रशंसनीय है।

फिर भी हमारी राय में इस समय तक हिन्दी में कोई ऐसा कविता-संग्रह तैयार नहीं किया गया था, जिसमें प्राचीन हिन्दी कविता से लेकर आज तक की हिन्दी कविता का प्रतिनिधित्व भी हो, और इस पर भी वह पुस्तक आकार तथा दाम में बहुत छोटी हो। विशेषतः विद्यार्थियों और सामान्यतः कविता-प्रेमियों के लिए ऐसी पुस्तक की नितान्त आवश्यकता हम अनुभव कर रहे थे। परन्तु यह काम बड़ा दुस्साध्य था। इतनी कविताओं में से सिर्फ़ ५०, ६० कविताओं को चुनना, वह भी इस दृष्टि से कि प्रत्येक कवि का उस में प्रतिनिधित्व हो जाय, आसान काम नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तथापि प्रयत्न करने पर, जब श्री अयोध्यासिंह उपाध्याय जैसे प्रमाणिक, बहुश्रुत और योग्य कवि ने यह काम अपने पर लेकर इसे सुसम्पन्न कर डाला, तभी हमें यह साहस हुआ है कि इस १०८ पन्ने के कविता-संग्रह को हम आज हिन्दी जगत के समक्ष प्रस्तुत कर रहे हैं। हमें इस बात का पूर्ण सन्तोष है कि यह छोट-सा कविता-संग्रह सम्पूर्ण हिन्दी-कविता का प्रतिनिधित्व करता है।

आशा है, हिन्दी कविता के प्रेमी इस संग्रह को अपना कर हमारा उत्साह बढ़ाएँगे।

—चन्द्रगुप्त विद्यालंकार

सम्पादक, विश्व-साहित्य ग्रन्थमाला

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सूची

	विषय		पृष्ठ
१	रहीम	...	६
२	कबीर	...	१४
३	हम्मीर रासो	...	२०
४	सूरदास	...	२३
५	तुलसीदास	...	२८
६	केशवदास	...	४४
७	भूषण	...	४६
८	बिहारी	...	४८
९	वृन्द	...	५१
१०	हरिश्चन्द्र	...	५५
११	प्रताप नारायण मिश्र	...	६०
१२	नाथूराम शंकर	...	६१
१३	देवी प्रसाद 'पूर्ण'	...	६४
१४	श्रीधर पाठक	...	६७
१५	अयोध्यासिंह उपाध्याय	...	७०
१६	रामचरित उपध्याय	...	७६
१७	गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही'	...	८३

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

	विषय		पृष्ठ
१८	'वियोगी हरि'	...	८५
१९	मैथिली शरण गुप्त	...	८८
२०	रूपनारायण पाण्डेय	...	९३
२१	जय शंकर 'प्रसाद'	...	९६
२२	बदरीनाथ भट्ट	...	९९
२३	गोपाल शरण सिंह	...	१०१
२४	गुलाब रत्न बाजपेयी	...	१०२
२५	सुमित्रानन्दन पन्त	...	१०४
२६	सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'	...	१०६

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सरस संग्रह

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सरस संग्रह

रहीम

तरुवर फल नहिं खात हैं, सरवर पियहिं न पान।
कहि रहीम परकाज हित, सम्पति सँचहिं सुजान ॥ १ ॥
जो रहीम होती कहूँ, प्रभु-गति अपने हाथ।
तौ कोधौं केहि मानतो, आप बड़ाई साथ ॥ २ ॥
यों रहीम सुख दुख सहत, बड़े लोग सह सांति।
उवत चन्द्र जिहि भांति से, अथवत वाही भांति ॥ ३ ॥
तब ही लग जीबो भलो, दीबो परै न धीम।
बिन दीबो जीबो जगत, हमहिं न रुचै रहीम ॥ ४ ॥
रहिमन देखि बड़ेन को, लघु न दीजिये डारि।
जहाँ काम आवै सुई, कहा करै तरवारि ॥ ५ ॥
धनि रहीम गति मीन की, जल बिछुरत जिय जाय।
जियत कंज तजि अंत बसि, कहा भौंर को भाय ॥ ६ ॥
सरवर के खग एक से, बाढ़त प्रीति न धीम।
पै मराल को मानसर, एकै ठौर रहीम ॥ ७ ॥
मान सरोवर ही मिलै, हंसनि मुक्ता भोग।
सफरिन भरे रहीम सर, बक बालकनहिं जोग ॥ ८ ॥
रहिमन जाचकता गहे, बड़े छोट ह्वै जात।
नारायण हूँ को भयो, बावन आँगुर गात ॥ ९ ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

रहिमन बिगरी आदि की, बनै न खरचे दाम।
हरि बाढ़े आकास लौं, तऊ बावनै नाम ॥१०॥
माँगे घटत रहीम पद, कितौ करौ बढ़ि काम।
तीन पैर बसुधा करी, तऊ बावनै नाम ॥११॥
संतत संपति जानि के, सब को सब कछु देइ।
दीनबन्धु बिन दीन की, को रहीम सुधि लेइ ॥१२॥
समय दसा कुल देखि के, लोग करत सनमान।
रहिमन दीन अनाथ को, तुम बिन को भगवान ॥१३॥
सर सूखे पंछी उड़ैं, औरै सरन समाहिं।
दीन मीन बिन पच्छ के, कहु रहीम कहँ जाहिं ॥१४॥
राम न जाते हरिन संग, सीय न रावन साथ।
जो रहीम भावी कतहुँ, होति आपने हाथ ॥१५॥
कहु रहीम कैसे निभै, बेर केर को संग।
वे डोलत रस आपने, उन के फाटत अंग ॥१६॥
जो रहीम ओछो बढ़ै, तौ तितही इतराय।
प्यादे से फरजी भयो, टेढ़ो टेढ़ो जाय ॥१७॥
रहिमन सूधी चाल सों, प्यादा होत वजीर।
फरजी मीर न ह्वै सकै, टेढ़े की तासीर ॥१८॥
खीरा को मुँह काटि के, मलियत लोन लगाय।
रहिमन करुवे मुखन की, चाहिय यही सजाय ॥१९॥
जो विषया संतन तजी, मूढ़ ताहि लपटात।
जो नर डारत वमन कर, स्वान स्वाद सों खात ॥२०॥
कमला थिर न रहीम कहि, यह जानत सब कोय।
पुरुष पुरातन की बधू, क्यों न चंचला होय ॥२१॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

रहिमन कहत सुपेट सों, क्यों न भयो तू पीठ।
रीते अनरीते करत, भरे बिगारत दीठ ॥२२॥
जे गरीब सों हित करैं, धनि रहीम वे लोग।
कहा सुदामा बापुरो, कृष्ण मिताई जोग ॥२३॥
दिव्य दीनता के रसहिं, का जाने जग अंधु।
भली बिचारी दीनता, दीन-बन्धु से बन्धु ॥२४॥
दीन सबन को लखत है, दीनहिं लखै न कोय।
जो रहीम दीनहिं लखै, दीनबन्धु सम होय ॥२५॥
जो रहीम उत्तम प्रकृति, का करि सकत कुसंग।
चन्दन विष व्यापत नहीं, लपटे रहत भुजंग ॥२६॥
आप न काहू काम के, डार पात फल मूर।
औरन को रोकत फिरैं, रहिमन कूर बबूर ॥२७॥
जो बड़ेन को लघु कहौ, नहिं रहीम घटि जाहिं।
गिरिधर मुरलीधर कहे, कछु दुख मानत नाहिं ॥२८॥
बड़ दीन को दुख सुने, लेत दया उर आनि।
हरि हाथी सों कब हुती, कहु रहीम पहिचानि ॥२९॥
रहिमन राम न उर धरै, रहत विषय लिपटाय।
पसु खर खात सवाद सों, गुर गुलियाये खाय ॥३०॥
प्रीतम छबि नैनन बसी, परछबि कहाँ समाय।
भरी सराय रहीम लखि, आप पथिक फिरि जाय ॥३१॥
जेहि रहीम तन मन दियो, कियो हिये बिच भौन।
तासों दुख सुख कहन की, रही बात अब कौन ॥३२॥
जो पुरुषारथ ते कहूँ, सम्पति मिलति रहीम।
पेट लागि वैराट घर, तपत रसोई भीम ॥३३॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सब कोऊ सब सों करै, राम जुहार सलाम।
हित रहीम तब जानिये, जा दिन अटकै काम ॥३४॥
ज्यों रहीम गति दीप की, कुल कपूत गति सोय।
बारे उजियारो लगै, बढ़े अँधेरो होय ॥३५॥
सम्पति भरम गँवाइ के, हाथ रहत कछु नाहिं।
ज्यों रहीम ससि रहत है, दिवस अकासहिं माहिं ॥३६॥
अनुचित उचित रहीम लघु, करहिं बड़ेन के जोर।
ज्यों ससि के संजोग ते, पचवत आगि चकोर ॥३७॥
धनि रहीम जल पंक को, लघु जिय पियत अघाय।
उदधि बड़ाई कौन है, जगत पियासो जाय ॥३८॥
रहिमन नीचन संग बसि, लगत कलंक न काहि।
दूध कलारिन हाथ लखि, मद समुझहिं सब ताहि ॥३९॥
अमृत ऐसे बचन में, रहिमन रिस की गाँस।
जैसे मिसरिहुँ में मिली, निरस बाँस की फाँस ॥४०॥
गुन ते लेत रहीम जन, सलिल कूप तें काढ़ि।
कूपहुँ ते कहुँ होत है, मन काहू को बाढ़ि ॥४१॥
रहिमन मन महराज के, दृग सों नहीं दिवान।
जाहि देखि रीझै नयन, मन तेहि हाथ बिकान ॥४२॥
रहिमन लाख भली करौ, अगुनी अगुन न जाय।
राग सुनत पय पियत हूँ, साँप सहज धरि खाय ॥४३॥
सीत हरत तम हरत नित, भुवन भरत नहिं चूक।
रहिमन तेहि रवि को कहा, जो घटि लखै उलूक ॥४४॥
बिगरी बात बनै नहीं, लाख करौ किन कोय।
रहिमन बिगरे दूध को, मथे न माखन होय ॥४५॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

रहिमन निज मन की व्यथा, मन ही राखो गोय।
सुनि अठिलैहैं लोग सब, बाँटि न लैहै कोय ॥४६॥
रहिमन चुप ह्वै बैठिये, देखि दिनन को फेर।
जब नीके दिन आइहैं, बनत न लगिहैं देर ॥४७॥
रहिमन वे नर मरि चुके, जे कहुँ माँगन जाहिं।
उन से पहिले वे मुए, जिन मुख निकसति नाहिं ॥४८॥
रहिमन पानी राखिये, बिन पानी सब सून।
पानी गये न ऊबरै, मोती मानुस चून ॥४९॥
खैर खून खाँसी खुसी, बैर प्रीति मधु पान।
रहिमन दाबे ना दबै, जानत सकल जहान ॥५०॥
अब रहीम मुसकिल परी, गाढे दोऊ काम।
साँचे से तो जग नहीं, झूठे मिलैं न राम ॥५१॥
रहिमन बिपदा तू भली, जो थोरे दिन होय।
हित अनहित या जगत में, जानि परत सब कोय ॥५२॥
छिमा बड़ेन को चाहिये, छोटेन को उतपात।
का रहीम हरि को घट्यो, जो भृगु मारी लात ॥५३॥
रहिमन मोहिं न सुहाय, अमी पियावत मान बिन।
बरु विष देय बुलाय, प्रेम सहित मरिवो भलो ॥५४॥
धूर धरत नित सीस पर, कहु रहीम केहि काज।
जिहिं रज मुनि पत्नी तरी, सो ढूँढत गजराज ॥५५॥
ओछे काम बड़े करैं, तौ न बड़ाई होइ।
ज्यों रहीम हनुमन्त को, गिरधर कहै न कोइ ॥५६॥
कुटिलनि संग रहीम कहि, साधू बचते नाहिं।
ज्यों नैना सैननि करैं, उरज उमेठे जाहिं ॥५७॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तैं रहीम चित आपनो, कीन्हों चतुर चकोर।
निसि बासर लागो रहै, कृष्ण चन्द्र की ओर ॥५८॥

कबीर

साहेब सों सब होत है, बंदे तें कछु नाहिं।
राई ते पर्वत करे, पर्वत राई माँहिं ॥ १ ॥
जाको राखे साइयाँ, मारि न सक्के कोय।
बाल न बाँका करि सकै, जो जग बैरी होय ॥ २ ॥
साँई मेरा बानिया, सहज करै व्योपार।
बिन डाँड़ी बिन पालरे, तौले सब संसार ॥ ३ ॥
ज्यों तिल माँही तेल है, ज्यों चकमक में आगि।
तेरा साँई तूझ में, जागि सकै तो जागि ॥ ४ ॥
ज्यों नैनन में पूतरी, यों खालिक घट माँहि।
मूरख लोग न जानहीं, बाहर ढूँढ़न जाहिं ॥ ५ ॥
हंसा पय को काढ़ि ले, छीर नीन निरवार।
ऐसे गहै जो सार को, सो जन उतरे पार ॥६॥
छीर रूप सतनाम है, नीर रूप व्यवहार।
हंस रूप कोई साध है, तत का छानन हार ॥ ७ ॥
जबलग नाता जगत का, तबलग भक्ति न होय।
नाता तोड़ै हरि भजै, भक्त कहावै सोय ॥ ८ ॥
देखा देखी भक्ति का, कबहुँ न चढ़सी रंग।
बिपति पड़े यों छाँड़सी, ज्यों केंचुली भुजंग ॥ ६ ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कामी क्रोधी लालची, इन ते भक्ति न होय ।
भक्ति करै कोई सूरमा, जाति बरन कुल खोय ॥१०॥
दुख में सुमिरन सब करै, सुख में करै न कोय ।
जो सुख में सुमिरन करे, तो दुख काहे को होय ॥११॥
माला फेरत जुग गया, फिरा न मन का फेर ।
कर का मनका डारि के, मन का मनका फेर ॥१२॥
अवगुन मेरे बाप जी, बकस गरीब-निवाज ।
जो मैं पूत कपूत हौं, तऊ पिता को लाज ॥१३॥
हंसा बगुला एक सा, मान सरोवर माँहि ।
बगा ढँढ़ोरे माछरी, हंसा मोती खाँहि ॥१४॥
जिन ढूँढ़ा तिन पाइयाँ, गहरे पानी पैठि ।
मैं बपुरा बूड़न डरा, रहा किनारे बैठि ॥१५॥
सत्त नाम कड़ुवा लगै, मीठा लागै दाम ।
दुविधा में दोऊ गये, माया मिलो न राम ॥१६॥
सहज मिलै सो दूध सम, माँगा मिलै सो पानि ।
कह कबीर वह रक्त सम, जामैं ऐंचातानि ॥१७॥
सूरा सोइ सराहिये, लड़े धनी के हेत ।
पुरजा पुरजा होइ रहै, तऊ न छाँड़ैं खेत ॥१८॥
सूरा सोइ सराहिये, अंग न पहिरे लोह ।
जूझै सब बँद खोलि कै, छाँड़े तन का मोह ॥१९॥
कबिरा सीप समुद्र की, रटै पियास पियास ।
और बूँद को ना गहै, स्वाति बूँद की आस ॥२०॥
पपिहा का पन देख, कर धीरज रहै न रंच ।
मरते दम जल में पड़ा, तऊ न बोरी चंच ॥२१॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पंडित पढ़ि गुन पच मुए, गुरु बिन मिलै न ज्ञान।
ज्ञान बिना नहिं मुक्त है, सत्त शब्द परमान ॥२२॥
साध कहावन कठिन है, लंबा पेड़ खजूर।
चढ़ै तो चाखै प्रेम रस, गिरै तो चकनाचूर ॥२३॥
दाढ़ी मूँछ मुड़ाइ के, हूआ घोटम घोट।
मन को क्यों नहिं मूड़िए, जामें भरिया खोट ॥२४॥
मूँड मुड़ाए हरि मिलैं, सब कोइ लेहि मुड़ाय।
बार बार के मूँड़ने, भेड़ न बैकुंठ जाय ॥२५॥
केसन कहा बिगारिया, जो मूड़ौं सौ बार।
मन को क्यों नहिं मूँड़िये, जामें बिषै विकार ॥२६॥
कबिरा संगत साध की, हरै और की व्याधि।
संगत बुरी असाध की, आठो पहर उपाधि ॥२७॥
मथुरा आवैं द्वारिका, भावैं जा जगनाथ।
साध संगत हरि भजन बिनु, कछू न आवै हाथ ॥२८॥
ते दिन गये अकारथी, संगत भई न संत।
प्रेम बिना पशु जीवना, भक्ति बिना भगवंत ॥२९॥
कबिरा खाँई कोट, की पानी पिवै न कोय।
जाय मिलै जब गंग से, सब गंगोदक होय ॥३०॥
रात गँवाई सोय कर, दिवस गँवाया खाय।
हीरा जनम अमोल था, कौड़ी बदले जाय ॥३१॥
आछे दिन पाछे गये, गुरु से किया न हेत।
अब पछतावा का करै, चिड़िया चुग गई खेत ॥३२॥
काल्ह करै सो आज कर, आज करै सो अब्ब।
पल में परलै होयगी, बहुरि करैगा कब्ब ॥३३॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कबिरा गर्व न कीजिये, ऊँचा देख अवास।
काल्ह परों भुइँ लेटना, ऊपर जमसी घास ॥३४॥
माटी कहै कुम्हार सों, तू क्या रूँदै मोंहि।
इक दिन ऐसा होयगा, मैं रूँदूँगी तोहिं ॥३५॥
दुर्लभ मानुष जनम है, देह न बारंबार।
तरवर से पत्ता झड़ै, बहुरि न लागै डार ॥३६॥
आए हैं सो जायँगे, राजा रंक फकीर।
एक सिंघासन चढ़ि चला, एक बांधि जंजीर ॥३७॥
माली आवत देखि कै, कलियाँ करैं पुकार।
फूले फूले चुनि लिये, काल्हि हमारी बार ॥३८॥
हम जानै थे खायँगे, बहुत जमीं बहु माल।
ज्यों का त्यों ही रह गया, पकरि लै गया काल ॥३९॥
दस द्वारे का पींजरा, तमें पंछी पौन।
रहिबे को आचरज है, जाय तो अचरज कौन ॥४०॥
दुर्बल को न सताइये, जाकी मोटी हाय।
बिना जीव की स्वाँस से, लोह भसम ह्वै जाय ॥४१॥
या दुनिया में आइ के, छाँड़ि देइ तू ऐंठ।
लेना है सो लेइले, उठी जात है पैंठ ॥४२॥
ऐसी बानी बोलिये, मन का आपा खोय।
औरन को सीतल करै, आपहुँ सीतल होय ॥४३॥
जैसा अन जल खाइए, तैसा ही मन होय।
जैसा पानी पीजिये, तैसी बानी सोय ॥४४॥
मन मथुरा दिल द्वारिका, काया कासी जान।
दस द्वारे का देहरा, तामें जोति पिछान ॥४५॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पंडित पढ़ि गुन पच मुए, गुरु बिन मिलै न ज्ञान ।
ज्ञान बिना नहिं मुक्त है, सत्त शब्द परमान ॥२२॥
साध कहावन कठिन है, लंबा पेड़ खजूर ।
चढ़ै तो चाखै प्रेम रस, गिरै तो चकनाचूर ॥२३॥
दाढ़ी मूँछ मुड़ाइ के, हूआ घोटम घोट ।
मन को क्यों नहिं मूड़िए, जामें भरिया खोट ॥२४॥
मूँड मुड़ाए हरि मिलैं, सब कोइ लेहि मुड़ाय ।
बार बार के मूँड़ने, भेंड़ न बैकुंठ जाय ॥२५॥
केसन कहा बिगारिया, जो मूड़ौं सौ बार ।
मन को क्यों नहिं मूँड़िये, जामें बिषे बिकार ॥२६॥
कबिरा संगत साध की, हरै और की व्याधि ।
संगत बुरी असाध की, आठो पहर उपाधि ॥२७॥
मथुरा आवैं द्वारिका, आवैं जा जगनाथ ।
साध संगत हरि भजन बिनु, कछू न आवै हाथ ॥२८॥
ते दिन गये अकारथी, संगत भई न संत ।
प्रेम बिना पशु जीवना, भक्ति बिना भगवंत ॥२९॥
कबिरा खाँई कोट, की पानी पिवै न कोय ।
जाय मिलै जब गंग से, सब गंगोदक होय ॥३०॥
रात गँवाई सोय कर, दिवस गँवाया खाय ।
हीरा जनम अमोल था, कौड़ी बदले जाय ॥३१॥
आछे दिन पाछे गये, गुरु से किया न हेत ।
अब पछतावा का करै, चिड़िया चुग गई खेत ॥३२॥
काल्ह करै सो आज कर, आज करै सो अब्ब ।
पल में परलै होयगी, बहुरि करैगा कब्ब ॥३३॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कबिरा गर्व न कीजिये, ऊँचा देख अवास।
काल्ह परों भुइँ लेटना, ऊपर जमसी घास ॥३४॥
माटी कहै कुम्हार सों, तू क्या रूँदै मोंहि।
इक दिन ऐसा होयगा, मैं रूँदूँगी तोहिं ॥३५॥
दुर्लभ मानुष जनम है, देह न बारंबार।
तरवर से पत्ता झड़ै, बहुरि न लागै डार ॥३६॥
आए हैं सो जायँगे, राजा रंक फकीर।
एक सिंघासन चढ़ि चला, एक बांधि जंजीर ॥३७॥
माली आवत देखि कै, कलियाँ करैं पुकार।
फूले फूले चुनि लिये, काल्हि हमारी बार ॥३८॥
हम जानै थे खायँगे, बहुत जमीं बहु माल।
ज्यों का त्यों ही रह गया, पकरि लै गया काल ॥३९॥
दस द्वारे का पींजरा, तमें पंछी पौन।
रहिवे को आचरज है, जाय तो अचरज कौन ॥४०॥
दुर्बल को न सताइये, जाकी मोटी हाय।
बिना जीव की स्वाँस से, लोह भसम ह्वै जाय ॥४१॥
या दुनिया में आइ के, छाँड़ि देइ तू ऐंठ।
लेना है सो लेइले, उठी जात है पैंठ ॥४२॥
ऐसी बानी बोलिये, मन का आपा खोय।
औरन को सीतल करै, आपहुँ सीतल होय ॥४३॥
जैसा अन जल खाइए, तैसा ही मन होय।
जैसा पानी पीजिये, तैसी बानी सोय ॥४४॥
मन मथुरा दिल द्वारिका, काया कासी जान।
दस द्वारे का देहरा, तामें जोति पिछान ॥४५॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

न्हाये धोए क्या भया, जो मन मैल न जाय।
मीन सदा जल में रहै, धोए बास न जाय ॥४६॥
पोथी पढ़ि पढ़ि जग मुआ, पंडित हुआ न कोय।
एकै अच्छर प्रेम का, पढ़ै सो पंडित होय ॥४७॥
कुटिल वचन सबसे बुरा, जारि करै तन छार।
साधु बचन जल रूप है, बरसै अमृत धार ॥४८॥
आब गई आदर गया, नैनन गया सनेह।
ये तीनों तब ही गये, जबहिं कहा कछु देह ॥४९॥
बहुत जतन करि कीजिये, सब फल जाय नसाय।
कबिरा संचय सूम धन, अंत चोर लै जाय ॥५०॥
प्रभुता को सब कोउ भजै, प्रभु को भजै न कोय।
कह कबीरप्रभु को भजै, प्रभुता चेरी होय ॥५१॥
जहँ आपा तहँ आपदा, जहँ संसय तहँ सोग।
कह कबीर कैसे मिटैं, चारों दीरघ रोग ॥५२॥
आसन मारे का भया, मुई न मन की आस।
ज्यों तेली के बैल को, घर ही कोस पचास ॥५३॥
सीलवंत सब तें बड़ा, सर्व रतन की खानि।
तीन लोक की संपदा, रही तीन में आनि ॥५४॥
ज्ञानी दानी संजमी, दाता सूर अनेक।
जपिया तपिया बहुत हैं, सीलवंत कोइ एक ॥५५॥
छमा बड़न को चाहिये, छोटन को उत्पात।
कहा विष्णु को घट गयो, जो भृगु मारी लात ॥५६॥
जहाँ दया तहँ धर्म है, जहाँ लोभ तहँ पाप।
जहाँ क्रोध तहँ काल है, जहाँ छिमा तहँ आप ॥५७॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मरि जाऊँ माँगू नहीं, अपने तन के काज।
परमारथ के कारने, मोहिं न आवै लाज ॥५८॥
धीरे धीरे रे मना, धीरे सब कुछ होय।
माली सींचे सौ घड़ा, ऋतु आये फल होय ॥५९॥
बुरा जो देखन मैं चला, बुरा न मिलिया कोय।
जो दिल खोजों आपना, मुझसा बुरा न कोय ॥६०॥
मेरा मुझ में कुछ नहीं, जो कुछ है सो तोर।
तेरा तुझको सौंपते, क्या लागैगा मोर ॥६१॥
साँच बराबर तप नहीं, झूठ बराबर पाप।
जाके हिरदे साँच है, ता हिरदे गुरु आप ॥६२॥
साईं से साँचा रहो, साँई साँच सुहाय।
भावैं लंबे केस रख, भावैं घोट मुड़ाय ॥६३॥
बकरी पाती खात है, ताकी काढ़ी खाल।
जो बकरी को खात है, ताको कौन हवाल ॥६४॥
खुस खाना है खीचरी, माहिं परा टुक नोन।
मांस पराया खाय कर, गला कटावे कौन ॥६५॥
मन के मते न चालिये, मन के मते अनेक।
जो मन पर असवार है, साधु सो कोई एक ॥६६॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कर्म्म-गति

करम गति टारे नाहि टरी ।
मुनि वसिष्ठ से पंडित ज्ञानी सोध के लगन धरी ।
सीता हरण मरन दशरथ को बन में बिपति परी ॥
कहँ वह फंद कहाँ वह पारिध कहँ वह मिरग चरी ।
सीया को हर लैगो रावण सुवरन लंक जरी ॥
नीच हाथ हरिचंद बिकाने बलि पाताल धरी ।
कोटि गाय नित पुन्न करत नृप गिरगिट जोन परी ॥
पांडव जिनके आपु सारथी तिन पर बिपति परी ।
दुरयोधन को गरव घटायो जदुकुल नास करी ॥
राहु केतु औ भानु चन्द्रमा बिधि सँयोग परी ।
कहत कबीर सुनो भाई साधो होनी हो के रही ॥

——

हम्मीर रासो

रानी कहै सुनो महरावं ।
ऐसे बचन उचित नहिं भावं ॥
या तन बचन सार श्रुति भावै ।
तन मन धन दै वचन जु राखै ॥
तन धन भ्रात पुत्र अरु नारी ।
हरि विधु त्यागि वचन प्रतिपारी ॥
राजरु पाट अनित्य सु जानो ।
रहै नित्य इक सुजस बखानो ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

केकय ध्वज अधविग्रह दीनों।
विद्या भवन जीति जस लीनो॥
भव जो कही सत्य वह जानो।
और न होय कोटि बुधि ठानो॥
कव हठ करै अलावदी, रणत भँवर गढ़ आहि।
कवै सेख सरनो रहै, बहुरौ महिमा साहि॥
सूर सोच मन में करो, पदवी लहौ न फेरि।
जो हठ छंडों राव तुम, उतन लजै अजमेरि॥
सरन राखि सेख न तजो, तजो सीस गढ़ देस।
रानी राव हमीर को, यह दीन्हो उपदेस॥
कहँ पँवार जगदेव सीस, आपन कर कत्यौ।
कहाँ भोज विक्रम सु राव, जिन पर दुख मिल्यो॥
सवा भार नित करन, कनक विप्रन को दीनो।
रह्यो न रहिए कोय, देव नर नाग सुचीनो॥
यह बात राव हम्मीर सूँ, रानी इम आसा कहीं।
जो भए चक्कवै मंडली, सुनो राव दीखै नहीं॥
धन जोबन नर की दसा, सदा न एक बिहाय।
पाष पाँच शशि की कला, घटत घटत वढ़ि जाय॥
राखि सरन शेख न तजो, तजो सीस गढ़ वेगि।
हठ न तजो पतसाह सों, गहि कर तजो न तेगि॥
जितो ईश तुम्हें वर दियो, अब फिर चाहत काय।
करो जग पतसाह सों, सनमुख सार समाय॥
जीवन मरन संजोग जग, कौन मिटावै ताहि।
जो जन्मै संसार में, अमर रहै नहिं आहि॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कोउ सदा नहिं थिर रहै, नर तरु गिरवर ग्राम ।
कर्यो राज रणथंभ को, आपन तन परमान ॥
कहाँ जैत कहँ सूर कहँ, कहँ सोमेश्वर राण ।
कहाँ गए प्रथिराज जे जीति साह दल आण ॥
कहाँ जैत कहँ सूर प्रथि, जिन गह गौरी साह ।
हो तब जग में प्रबल है, चिंता किज्जिय काह ॥
हो तब मिटै न जगत में, कीजे चिन्ता कोहि ।
आसा कहै हमीर सों, अब चूको मति सोहि ॥
बिछुरन मिरन सँजोग जग, सब में यह विधि सोह ।
आसा कहै हमीर सँह, हम तुम भया बिछोह ॥
धन्य वंश जिहि जन्म तव, राव सराहत ताहि ।
और कौन तुम बिन त्रिया, बचन कहै समुझाय ॥
धनि पतिव्रता नारि तू, राव सराहत आप ।
अवर कौन तुझ बिन त्रिया, कहै वचन बिन पाप ॥
राखि सेख सरनौं तजौं, कुल लाजै चहुवाण ।
तुम साकौ गढ़ कीजिये, निरखि साह नीसाँण ॥
लीन परिच्छा बहुत मैं, तू छत्री कुलबाल ।
तुव मत मैं देख्यौ सुदृढ़, यही बात यहि काल ॥
सुने राव के बचन तब, परी धरनि मुरझाय ।
निठुर बचन मुख ते जुकहि, तजि रनिवास रिसाय ॥
हम पतिवरता पुरुष बिन, कौन दिसा चित को धरैं ।
आसा कहै हमीर सों, तुम पहला साको करैं ॥

———

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सूरदास

अविगत गति कछु कहत न आवै ।
ज्यों गूंगे मीठे फल को, रस अन्तर्गत ही भावै ॥
परम स्वादु सब ही जु निरंतर, अमित तोष उपजावै ।
मन बानी को अगम अगोचर, सो जानै जो पावै ॥
रूप रेख गुन जाति जुगुति बिनु, निरालम्ब मन चक्रत धावै ॥
सब बिधि अगम बिचारहिं ताते, सूर सगुन लीला पद गावै ॥

अब मैं नाच्यों बहुत गोपाल ।
काम क्रोध को पहिरि चोलना, कंठ विषय की माल ॥
महामोह के नूपुर बाजत, निंदा सब्द रसाल ।
भरम भर्यो मन भयो पखावज, चलत कुसंगति चाल ॥
तृस्ना नाद करत घट भीतर, नाना बिधि दै ताल ।
माया को कटि फेटा बाँध्यो लोभ तिलक दै भाल ॥
कोटिक कला काछि देखराई, जल थल सुधि नहिं काल ।
सूरदास की सबै अविद्या, दूरि करौ नँदलाल ॥

यसोदा मदन गुपाल सुवावै ।
देखि स्वप्न गति त्रिभुवन कंप्यो, ईस विरंचि भ्रमावै ॥
असित अरुन सित आलस लोचन, उभै पलक पर आवै ।
जनु रवि गति संकुचित कमल युग, निसि अलि उड़न न पावै ॥
चौंकि चौंकि सिसु दसा प्रगट करि, छवि मन में नहिं आवै ।
जानौ निसिपति धरि कर अमृत, श्रुति भंडार भरावै ॥
स्वास उदर उरसति यों मानो, दुग्ध सिंधु छबि पावै ।
नाभि सरोज प्रगट पद्मासन, उतरि नाल पछितावै ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कर सिर तर करि स्याम मनोहर, अलक अधिक सों भावै।
सूरदास मानों पन्नगपति, प्रभु ऊपर फन छावै॥

और न जानै जन की पीर।
जब जब दीन दुखित भये तब तब कृपा करी बलबीर॥
गज बलहीन बिलोकि चहूँ दिसि तब हरि सरन परो।
करुना-सिंधु दयालु दरस दै सब संताप हरो॥
मागध मथो, हरो नृप बंधन, मृतक विप्र-सुत दीनो।
गोपी गाय गोपसुत लगि प्रभु सात द्योस गिरि लीनो॥
श्रीनृसिंह बपु धारि असुर हति भगत बचन प्रतिपारो।
सुमिरत नाम द्रुपद-तनया कहँ पट समूह तन धारो॥
मुनि मद मेटि दास व्रत राख्यो अंबरीख हितकारी।
लाखागृह में शत्रु सैन तें पांडव बिपति निवारी॥
बरुनपास ब्रजपति मुकराये दावानल दुख टारो।
श्री बसुदेव देवकी के हित कंस महा खल मारो॥
सोइ श्रीपति जुग जुग सुमिरन बस बेद बिसद जस गावै।
असरन सरन 'सूर' जाँचत है, कोऊ सुरति करावै॥

प्रभु मेरे औगुन चित न धरो।
सम दरसी प्रभु नाम तिहारो अपने पनहिं करो॥
इक लोहा पूजा में राखत इक घर बधिक परो।
यह दुविधा पारस नहिं राखत कंचन करत खरो॥
एक नदिया एक नार कहावत मैलो नीर भरो।
जब मिलिकै दोउ एक बरन भए सुरसरि नाम परो॥
एक जीव इक ब्रह्म कहावत 'सूरस्याम' झगरो।
अब की बेर मोहिं पार उतारो नहिं पन जात टरो॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जसुदा हरि पालने झुलावै ।
हलरावै दुलराइ मल्हावै जोइ सोइ कछु गावै ॥
मेरे लाल को आउ निंदरिया काहे न आनि सुवावै ।
तू काहें न वेगि री आवै तोको कान्ह बुलावै ॥
कबहुँ पलक हरि मूँदि लेत हैं कबहुँ अधर फरकावै ।
सोवत जानि मौन ह्वै ह्वै रहि करि करि सैन बतावै ॥
एहि अन्तर अकुलाई उठे हरि जसुमति मधुरे गावै ।
जो सुख 'सूर' अमर मुनि दुर्लभ सो नंद भामिनि पावै ॥

चरन गहे अँगुठा मुख मेलत ।
नंद घरनि गावति हलरावति पलना पर किलकत हरि खेलत ॥
जो चरनारविंद श्री भूषन उरते नेकु न टारति ।
देखों धौं का रसु चरनन मैं मुख मेलत करि आरति ॥
जा चरनारविंद के रस को सुर नर करत बिबाद ।
यह रस तो है मोको दुरलभ ताते लेत सवाद ॥
उछलत सिंधु, धराधर काँप्यो, कमठ पीठि अकुलाइ ।
सेस सहस फन डोलन लागे हरि पीवत जब पाइ ॥
बढ़्यो बृच्छ बट, सुर अकुलाने गगन भयो उत्पात ।
महा प्रलय के मेघ उठे करि जहाँ तहाँ आघात ॥
करुना करी छाँड़ि पगु दीनो जानि सुरन मन संस ।
'सूरदास' प्रभु असुर निकंदन दुष्टन के उर गंस ॥

——

मैया कबहिं बढ़ैगी चोटी ।
किती वार मोहिं दूध पिवत भइ यह अजहूँ है छोटी ॥
तू जो कहति बल की वेनी ज्यों ह्वै है लाँबी मोटी ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

काढ़त गुहत न्हवावत पोंछत नागिन सी भुइँ लोटी ॥
काचो दूध पियावत पचि पचि देत न माखन रोटी।
'सूर' स्याम चिर जिउ दोउ भैया हरि हलधर की जोटी ॥

———

ठाढ़ी अजिर जसोदा अपने हरिहिं लिये चंदा दिखरावत।
रोवत कत बलि जाऊँ तुम्हारी देखौ धौं भरि नैन जुड़ावत ॥
चितै रहे तब आपुन ससि तन अपने कर लै लै जु बतावत।
मीठो लगत किधौं यह खाटो देखत अति सुंदर मन भावत ॥
मन ही मन हरि बुद्धि करत है माता को कहि ताहि मँगावत।
लागी भूख चंद मैं खैहौं देहु देहु रिस करि विरुझावत ॥
जसुमति कहत कहा मैं कीनो रोवत मोहन अति दुख पावत।
'सूर' स्याम को जसुदा बोधति गगन चिरैया उड़त लखावत ॥

———

मेरो माई ऐसो हठी बाल गोबिंदा।
अपने कर गहि गगन बतावत खेलन को माँगे चन्दा ॥
बासन कै जल धरयो सजोदा हरि को आनि दिखावै।
रुदन करत ढूँढ़ै नहिं पावत धरनि चंद कैसे आवै ॥
दूध दही पकवान मिठाई जो कछु माँगु मेरे छौना।
भौंरा चकई लाल पाट को लडुवा माँगु खिलौना ॥
दैत्य दलन गजदंत उपारन कंस केस धरि फंदा।
'सूरदास' बलि जाइ जसोमति सुखसागर दुख खंदा ॥

———

जागिये ब्रजराज कुँवर कमल कुसुम फूले।
कुमुद बृन्द सकुचित भए भृंग लता भूले ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तम चुर खग रौर सुनहु बोलत बनराई।
राँभति गौ खरिकन में बछरा हित धाई॥
बिधु मलीन रवि प्रकाश गावत नरनारी।
'सूर' स्याम प्रात उठौ अंबुज कर धारी॥

——

मैया मोहिं दाऊ बहुत खिजायो।
मोसों कहत मोल को लीनो तोहि जसुमति कब जायो॥
कहा कहौं एहि रिस के मारे खेलन हौं नहिं जातु।
पुनि पुनि कहत कौन है माता को है तुम्हरो तातु॥
गोरे नंद जसोदा गोरी तुम कत स्याम सरीर।
चुटकी दै दै हँसत ग्वाल सब सिखै देत बलबीर॥
तू मोही को मारन सीखी दाउहिं कबहुँ न खीझै।
मोहन को मुख रिस समेत लखि जसुमति सुन सुन रीझै॥
सुनहु कान्ह बलभद्र चबाई जनमत ही को धूत।
'सूर' स्याम मोहिं गोधन की सौं हौं माता तू पूत॥

——

मैया! मैं नाहीं दधि खायो।
ख्याल परे ये सखा सबै मिलि मेरे मुख लपटायो॥
देखि तुही सींके पर भाजन ऊँचे घर लटकायो।
तुही निरखि नान्हे कर अपने मैं कैसे करि पायो॥
मुख दधि पोंछि कहत नँदनंदन दोना पीठि दुरायो।
डारि साँट मुसकाइ तबहिं गहि सुत को कंठ लगायो॥
बाल विनोद मोद मन मोह्यो भगति प्रताप देखायो।
'सूरदास' प्रभु जसुमति के सुख सिव विरंचि बौरायो॥

——

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

श्री गोस्वामी तुलसीदास

अंगद रावण संवाद

(रामायण से)

कह दसकठ कवन तैं बन्दर। मैं रघुबीर-दूत दसकंधर ॥
मम जनकहिं तोहिं रही मिताई। तव हितकारन आयेउँ भाई ॥
उत्तम कुल पुलस्त कर नाती। सिव बिरंचि पूजेहु बहु भाँती ॥
बर पायेहु कीन्हेहु सब काजा। जीतेहु लोकपाल सब राजा ॥
नृप अभिमान मोह वस किंबा। हरि आनेहु सीता जगदंबा ॥
अब सुभ कहा सुनहु तुम्ह मोरा। सब अपराध छमिहिं प्रभु तोरा ॥
दसन गहहु तृन कंठ कुठारी। परिजनसहित संग निज नारी ॥
सादर जनक-सुता करि आगे। एहि बिधि चलहु सकल भय त्यागे॥
दो०—प्रनतपाल रघु-बंस-मनि, त्राहि त्राहि अब मोहिं।
सुनतहि आरत बचन प्रभु, अभय करहिंगे तोहिं ॥
रे कपिपोच न बोल सँभारी। मूढ़ न जानसि मोहिं सुरारी ॥
कहु निज नाम जनक कर भाई। केहि नाते मानिए मिताई ॥
अंगद नाम बालि कर बेटा। तासों कबहुँ भई ही भेंटा ॥
अंगद बचन सुनत सकुचाना। रहा बालि वानर मैं जाना ॥
अंगद तहीं बालि कर बालक। उपजेहु बंस अनल कुल घालक ॥
गर्भ न गयेउ व्यर्थ तुम्ह जायेहु। निजमुख तापसदूत कहायेहु ॥
अब कहु कुशल बालि कहँ अहई। बिहँसि बचन तब अंगद कहई ॥
दिन दस गए बालि पहँ जाई। बूझेहि कुशल सखहिं उर लाई ॥
राम विरोध कुशल जस होई। सो सब तोहिं सुनाइहि सोई ॥
सुनु सठ भेद होइ मन ताके। श्री-रघु-बीर हृदय नहिं जाके ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

दो०—हम कुलघालक सत्य तुम्ह, कुलपालक दससीस।
अंधउ बहिर न अस कहहिं, नयन कान तव बीस॥
सिव-बिरंचि-सुर मुनि समुदाई। चाहत जासु चरन-सेवकाई॥
तासु दूत होइ हम कुल बोरा। ऐसिहु मति उर बिहरु न तोरा॥
सुनि कठोर बानी कपि केरी। कहत दसानन नयन तरेरी॥
खल तव कठिन बचन सब सहऊँ। नीति धर्म मैं जानत अहऊँ॥
कह कपि धर्मशीलता तोरी। हमहु सुनी कृत परतिय चोरी॥
देखेउ नयन दूत रखवारी। बूडि न मरहु धर्म-व्रत-धारी॥
नाक कान बिनु भगिनि तिहारी। छमा कीन्ह तुम्ह धर्म बिचारी॥
धर्मसीलता तव जग जागी। पावा दरसु हमहुँ बड़भागी॥
दो०—जनि कल्पसि जड़ जन्तु कपि, सठ बिलोकु मम बाहु।
लोक-पाल-बल-विपुल-ससि, ग्रसन हेतु जिमि राहु॥
पुनि नभसर मम कर-निकर-कमलन्हि पर करि बास।
सोभत भयेउ मराल इव, संभुसहित कैलास॥
तुम्हरे कटक माँझ सुनु अङ्गद। मो सन भिरिहि कवन जोधाबद॥
तव प्रभु नारि बिरह बलहीना। अनुज तासु दुख दुखी मलीना॥
तुम्ह सुग्रीवँ कूलद्रुम दोऊ। अनुज हमार भीरु अति सोऊ॥
जामवंत मंत्री अति बूढ़ा। सो कि होइ अब समर अरूढ़ा॥
सिलपकर्म जानहिं नलनीला। है कपि एक महा-बल-सीला॥
आवा प्रथम नगर जेहिं जारा। सुनि हँसि बोलेउ बालिकुमारा॥
सत्यबचन कहु निसि-चर-नाहा। साँचेहु कीस कीन्ह पुरदाहा॥
रावन नगरु अलप कपि दहई। को अस भूठ सुनै को कहई॥
जो अति सुभट सराहेहु रावन। सो सुग्रीवँ केर लघु धावन॥
चलइ बहुत सो बीर न होई। पठवा खबरि लेन हम सोई॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

दो०—अब जानेउ तुर दहेउ कपि बिनु प्रभु आयसु पाइ।
फिरि न गयेउ सुग्रीव पहिं तेहि भय रहा लुकाइ॥
सत्य कहेहु दसकंठ सब मोहिं न सुनि कछु कोह।
कोउ न हमरे कटक अस तोसन लरत जो सोह॥
प्रीति विरोध समान सन करिअ नीति असि आहि।
जौं मृगपति वध मेडुकन्हि भल कि कहै कोउ ताहि॥
जद्यपि लघुता राम कहँ तोहिं बधें बड़ दोष।
तदपि कठिन दसकंठ सुनु क्षत्रि जाति कर रोष॥
बक्र उक्ति धनु बचन सर हृदय दहेउ रिपु कीस।
प्रति उत्तर सड़सिन्ह मनहुँ काढ़त भट दससीस॥
हँसि बोलेउ दस मौलि तब कपि कर बड़ गुन एक।
जो प्रतिपालै तासु हित करै उपाय अनेक॥

धन्य कीस जो निज प्रभु काजा। जहँ तहँ नाचै परिहरि लाजा॥
नाचि कूदि करि लोग रिझाई। पतिहित करै धर्म निपुनाई॥
अङ्गद स्वामिभक्त तव जाती। प्रभुगुन कस न कहसिएहिभाँती॥
मैं गुनगाहक परम सुजाना। तव कटु रटनि करौं नहिं काना॥
कह कपि तव गुन गाहक ताई। सत्य पवनसुत मोहिं सुनाई॥
बन विधंसि सुतवधि पुर जारा। तदपि न तेहि कछु कृतअपकारा॥
सोइ विचारि तव प्रकृति सुहाई। दसकंधर मैं किन्ह ढिठाई॥
देखेउँ आई जो कछु कपिभाषा। तुम्हरे लाज, न रोष, न माषा॥
जौंअसि मति पितुखायेहुकीसा। कहि अस बचन हँसा दससीसा॥
पितहिं खाइ खातेउँ पुनि तोहीं। अबहीं समुझि परा कछु मोहीं॥
बाल-विमल-जस-भाजन जानी। हतौं न तोहिं अधम अभिमानी॥
कहु रावन रावन जग केते। मैं निज स्रवन सुने सुनु जेते॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बलिहिं जितन एकु गयेउ पताला । राखा बांधि सिसुन्ह हयसाला ॥
खेलहिं बालक मारहिं जाई । दया लागि बलि दीन्ह छोड़ाई ॥
एक बहोरि सहस भुज देखा । धाइ धारा जिमि जंतु बिसेखा ॥
कौतुक लागि भवन लै आवा । सो पुलस्ति मुनि जाइ छोड़ावा ॥

दो०—एक कहत मोहिं सकुच अति, रहा बालि की कांख ।
तिन्ह महँ रावन तैं कवन, सत्य वदहि तजि माख ।

सुनु सठ सोइ रावन बलसीला । हरगिरि जान जासु भुज लीला ॥
जानु उमापति जासु सुराई । पूजेउँ अमित बार त्रिपुरारी ॥
भुज बिक्रम जानहिं दिगपाला । सठ अजहूँ जिन्हके उर साला ॥
जानहिं दिग्गज उर कठिनाई । जब जब भिरेउँ जाइ बरिआई ॥
जिन्ह के दसन कराल न फूटे । उर लागत मूलक इव टूटे ॥
जासु चलत डोलत इमि धरनी । चढ़त मत्त गज जिमि लघु तरनी ॥
सोइ रावन जग विदित प्रतापी । सुने न स्रवन अलीक प्रलापी ॥

दो०—तेहि रावन कहँ लघु कहसि, नर कर करसि बखान ।
रे कपि बर्बर खर्ब खल, अब जाना तव ग्यान ॥

सुनि अंगद सकोप कह बानी । बोलु सँभारि अधम अभिमानी ॥
सहस-बाहु-भुज-गहन अपारा । दहन अनल सम जासु कुठारा ॥
जासु परसु-सागर-खर-धारा । बूड़े नृप अगनित बहु बारा ॥
तासु गर्व जेहि देखत भागा । सो नर क्यों दस सीस अभागा ॥
राम मनुज कस रे सठ बंगा । धन्वी कामु, नदी पुनि गंगा ॥
पसु सुर धेनु, कलपतरु रूखा । अन्न दान, अरु रस पीयूखा ॥
वैनतेय खग, अहि सहसानन । चिंतामनि की उपल दसानन ॥
सुनु मतिमंद ! लोक बैकुँठा । लाभु कि रघु-पति-भगति अकुंठा ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

दो०—सेन सहित तव मान मथि, बन उजारि पुर जारि।
कस रे सठ हनुमान कपि, गयेउ जो तव सुत मारि॥
सुनु रावन परिहरि चतुराई। भजसि न कृपासिन्धु रघुराई॥
जौं खल भयेसि राम कर द्रोही। ब्रह्म रुद्र सक राखि न तोही॥
मूढ़ मुधा जनि मारसि गाला। राम बैर होइहि अस हाला॥
तव सिर निकर कपिन्ह के आगे। परिहहिं धरनि रामसर लागे॥
ते तव सिर कन्दुक इव नाना। खेलिहहिं भालु कीस चौगाना॥
जबहिं समर कोपहिं रघुनायक। छुटिहहिं अति कराल बहु सायक॥
तबकिचलिहि असगाल तुम्हारा। अस बिचारि भजु राम उदारा॥
सुनत वचन रावनु परजरा। जरत महानल जनु घृत परा॥
दो०—कुंभकरन अस बंधु मम, सुत प्रसिद्ध सक्रारि।
मोर पराक्रम सुनेसि नहि, जितेउँ चराचर झारि॥
सठ साखामृत जोरि सहाई। बाँधा सिन्धु इहै प्रभुताई॥
नाँघहिं खग अनेक बारीसा। सूर न होहिं ते सुनु जड़ कीसा॥
मम भुज-सागर-बल-जल-पूरा। जहँ बूड़े बहु सुर नर सूरा॥
वीस पयोधि अगाध अपारा। को अस बीर जो पाइहि पारा॥
दिग पालन्ह मैं नीर भरावा। भूप सुजसु खल मोहिं सुनावा॥
जौं पै समर सुभट तव नाथा। पुनि पुनि कहसि जासुगुन गाथा॥
तौ बसीठ पठवत केहि काजा। रिपु सन प्रीति करत नहिं लाजा॥
हर-गिरि-मथन निरखु मम बाहू। पुनि सठ कपि निज प्रभुहिं सराहू॥
दो०—सूर कवन रावन सरिस, स्वकर काटि जेहि सीस।
हुते अनल महँ बार बहु, हरषि साषि गौरीस॥
जरत बिलोकेउँ जबहिं कपाला। विधि के लिखे अंक निज भाला॥
नर के कर आपन वध बाँची। हँसेउँ जानि विधि गिरा असाँची॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सोउ मन समुझि त्रासनहिं मोरे। लिखा विरंचि जरठ मति भोरे॥
आन वीरवल सठ मम आगे। पुनि पुनि कहसि लाज पति त्यागे॥
कह अंगद सलज्ज जग माहीं। रावन तोहिं समान कोउ नाहीं॥
लाजवंत तव सहज सुभाऊ। निज मुख निजगुन कहसि न काऊ॥
सिर अरु सैल कथा चित रही। तातें बार बीस तैं कही॥
सो भुजबल राखेहु उर घाली। जीतेहु सहसबाहु बलि बाली॥
सुनु मतिमंद देहि अब पूरा। काटे सीस कि होइअ सूरा॥
बाजीगर कहँ कहिअ न वीरा। काटै निज कर सकल सरीरा॥
दो०—जरहिं पतंग बिमोह बस भार वहहिं खरवृंद।
ते नहिं सूर कहावहीं समुझि देखु मतिमंद॥
अब जनि बात-बढ़ाव खल करही। सुनु मम बचन मान परिहरही॥
दसमुख मैं न बसीठी आयेउँ। अस विचारि रघुबीर पठायेउँ॥
बार बार अस कहेउ कृपाला। नहिं गजारि जस बधैं सृगाला॥
मन महँ समुझि बचन प्रभु केरे। सहेउँ कठोर बचन सठ तेरे॥
नाहिं त करि मुख भंजन तोरा। लै जातेउँ सीतहिं बर जोरा॥
जानेउँ तव बल अधम सुरारी। सूने हरि आनेसि परनारी॥
तैं निसि-चर-पति गर्व बहूता। मैं रघु-पति-सेवक कर दूता॥
जौं न राम अपमानहिं डरऊँ। तोहिं देखत अस कौतुक करऊँ॥
दो०—तोहिं पटकि महि सेन हति चौपट करि तव गाउँ।
मंदोदरी समेत सठ जनक सुतहिं लेइ जाऊँ॥
जौं अस करौं तदपि न बड़ाई। मुयेहि बधे कछु नहिं मनुसाई।
कौल काम बस कृपिन बिमूढ़ा। अति दरिद्र अजसी-अति बूढ़ा॥
सदा रोग बस संतत क्रोधी। विष्णु बिमुख श्रुति-संत-बिरोधी॥
तनुपोषक निंदक अघखानी। जीवत सवसम चौदह प्रानी॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अस बिचारि खल बधौं न तोहीं । अब जनि रिस उपजावसि मोहीं ॥
सुनि सकोप कह निसचर-नाथा । अधर दसन दँसि मींजत हाथा ॥
रे कपि अधम मरन अब चहसी । छोटे वदन बात बड़ि कहसी ॥
कटु जल्पसि जड़ कपि बल जाके । बल प्रताप बुध तेज न ताके ॥

दो०—अगुन अमान बिचार तेहि दीन्ह पिता बनवास ।
सो दुख अरु जुवती विरहु पुनि निसि दिन मम त्रास ॥
जिनके बल कर गर्व तोहिं ऐसे मनुज अनेक ।
खाहिं निसाचर दिवस निसि, मूढ़ समुझु तजि टेक ॥

जब तेहि कीन्ह राम कै निन्दा । क्रोधवंत अति भयेउ कपिंदा ॥
हरि-हर-निन्दा सुनै जो काना । होइ पाप गो घात समाना ॥
कटकटान कपि कुंजर भारी । दुहुँ भुजदंड तमकि महि मारी ॥
डोलत धरनि सभासद खसे । चले भागि भय मारुत ग्रसे ॥
गिरत दसानन उठेउ सँभारी । भूतल परे मुकुट षट चारी ॥
कछु तेहि लै निज सिरन्हि सँवारे । कछु अंगद प्रभु पास पबारे ॥
आवत मुकुट देखि कपि भागे । दिन ही लूक परन विधि लागे ॥
की रावन करि कोप चलाये । कुलिस चारि आवत अति धाये ॥
कह प्रभु हँसि जनि हृदय डेराहू । लूक न असनि केतु नहिं राहू ॥
ए किरीट दसकंधर केरे । आवत बालितनय के प्रेरे ॥

दो०—कूदि गहे कर पवन सुत, आनि धरे प्रभु पास ।
कौतुक देखहिं भालु कपि, दिन-कर-सरिस-प्रकास ।

उहाँ कहत दसकंध रिसाई । धरि मारहु कपि भागि न जाई ॥
एहिविधि वेगि सुभट सब धावहु । खाहु भालु कपि जहँ तहँ पावहु ॥
मरकट हीन करहु महि जाई । जिअत धरहु तापस दोउ भाई ॥
पुनि सकोप बोलेउ जुवराजा । गाल बजावत तोहिं न लाजा ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मरु गर काटि निलज कुल घाती। बल बिलोकि बिहरति नहिं छाती
रे तिय-चोर कु-मारगगामी। खल मलराजि मंदमति कामी॥
सन्निपात जल्पसि दुर्बादा। भयेसि कालबस खल मनुजादा॥
याकर फल पावहुगे आगे। बानर-भालु-चपेटन्हि लागे॥
राम मनुज बोलत असि बानी। गिरहिं न तव रसना अभिमानी॥
गिरिहहिं रसना संसय नाहीं। सिरन्हि समेत समरमहि माहीं॥
सो०—सो नर क्यों दसकंध, बालि बधेउ जेहि एक सर।
वीसहु लोचन अंध, धिग तव जनम कुजाति जड़॥
तव सोनित की प्यास तृषित राम-सायक-निकर।
तजौं तोहिं तेहि त्रास कटु जल्पक निसिचर अधम॥
मैं तव दसन तोरिबे लायक। आयसु मोहिं न दीन्ह रघुनायक॥
असि रिसि होत दसउ मुख तोरौं। लंका गहि समुद्र महँ बोरौं॥
गूलर फल समान तव लंका। बसहु मध्य तुम्ह जंतु असंका॥
मैं बानर फल खात न बारा। आयसु दीन्ह न राम उदारा॥
जुगुति सुनत रावन मुसुकाई। मूढ़ सीख कहँ बहुत झुठाई॥
बालि न कबहुँ गालु अस मारा। मिलि तपसिन्ह तैं भयेसि लबारा॥
साचेहु मैं लबार भुज बीहा। जौं न उपारौं तव दस जीहा॥
रामु प्रतापु सुमिरि कपि कोपा। सभा माँझ पन करि पद रोपा॥
जौं मम चरन सकसि सठ टारी। फिरहिं राम सीता मैं हारी॥
सुनहु सुभट सब कह दससीसा। पदगहि धरनि पछारहु कीसा॥
इन्द्रजीत आदिक बलवाना। हरषि उठे जहँ तहँ भट नाना॥
झपटहि करि बल बिपुल उपाई। पद न टरै बैठहिं सिरु नाई॥
पुनि उठि झपटहिं सुर आराती। टरै न कीस चरन एहि भाँती॥
पुरुष कुजोगी जिमि उरगारी। मोह बिपट नहिं सकहिं उपारी॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

दो०—कोटिन्ह मेघ-नाद-सम सुभट उठे हरखाइ।
झपटहिं टरै न कपि चरन पुनि बैठहिं सिरु नाई॥
भूमि न छाँड़त कपि चरन देखत रिपुमद भाग।
कोटि विघ्न तें संत कर मन जिमि नीति न त्याग॥

कपि बलु देखि सकल हिय हारे। उठा आप जुवराज प्रचारे॥
गहत चरन कह बालिकुमारा। मम पद गहे न तोर उबारा॥
गहसि न रामचरन सठ जाई। सुनत फिरा मन अति सकुचाई॥
भयेउ तेजहत श्री सब गई। मध्य दिवस जिमि ससि सोहई॥
सिंघासन बैठेउ सिर नाई। मानहुँ संपति सकल गँवाई॥
जगदातमा प्रानपति रामा। तासु विमुख किमि लह बिस्रामा॥
उमा रामकर भृकुटि-बिलासा। होइ विस्व, पुनि पावै नासा।
तृन तें कुलिस,कुलिस तृन करई। तासु दूत पन कहु किमि टरई॥
पुनि कपि कही नीति विधि नाना। मान न ताहि काल नियराना॥
रिपु मद मथि-प्रभु-सुजस सुनायेउ। यह कहि चलेउ बालिनृप जायेउ॥
हतौं न खेत खेलाइ खेलाई। तोहिं, अबहिं का करौं बड़ाई॥
प्रथमहिं तासु तनय कपि मारा। सो सुनि रावनु भयेउ दुखारा॥
जातुधान अंगदपन देखी। भय-व्याकुल सब भये बिसेखी॥

दो०—रिपुबल धरषि हरषि कपि बालितनय बल पुंज।
सजल नयन, तन पुलक अति गहे राम पद कंज॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पार्वती-प्रेम-परीक्षा

(*पार्वती मंगल से*)

देखि सराहहिं गिरिजहिं मुनिवरु गुनि बहु।
अस तप सुना न दीख कबहुँ काहू कहुँ॥
काहू न देख्यो कहहिं यह तपु जोग फल फल चारिका।
नहिं जानि जाइ, न कहति, चाहति काहि कुधर कुमारिका॥
बटुवेष पेषन प्रेम पन व्रत नेमससिसेखर गये।
मनसहिं समरपेउ आपु गिरिजहिं, वचन मृदु बोलत भये॥
देखि दसा करुनाकर हर दुख पायउ।
मोर कठोर सुभाय, हृदय खसि आयउ॥
बंस प्रसंसि मातु पितु कहि सब लायक।
अमिअ बचन बटु बोलेउ सुनि सुखदायक॥
"देवि ! करौं कछु बिनय सो बिलगु न मानब।
कहौं सनेह सुभाय साँच जिय जानब॥
जनमि जगत जस प्रगटिहु मातु-पिता कर।
तीय रतन तुम उपजिहु भव–रतनाकर॥
अगम न कुछ जग तुम कहँ, मोहिं अस सूझइ।
बिनु कामना कलेस कलेस न बूझइ॥
जौं वर लागि करहु तपु तौ लरिकाइय।
पारस जौं घर मिलै तौ मेरु कि जाइय?
मोरे जान कलेस करिय बिनु काजहिं।
सुधा कि रोगिहिं चाहहिं, रतन कि राजहिं?"
लखि न परेउ तप कारन बटु हिय हारेउ।
सुनि प्रिय बचन ससीमुख गौरि निहारेउ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गौरि निहारेउ ससीमुख, रुख पाइ तेहि कारन कहा।
"तप करहिं हरहितु" सुनि बिहँसि बटु कहत "मुरुखाई महा" ॥
जेहि दीन्ह अस उपदेस बरहु कलेस करि बर बावरो।
हित लागि कहौं सुभाय सों बड़ बिषम बैरी रावरो॥

कहहु काह सुनि रीझेहु बरु अकुलीनहिं।
अगुन अमान अजाति मातु पितु हीनहिं॥
भीख माँगि भव खाहिं, चिता नित सोवहिं।
नाचहिं नगन पिसाच, पिसाचिनि जोवहिं॥
भाँग धतूर अहार, छार लपटावहिं।
जोगी, जटिल, सरोष, भोग नहिं भावहिं॥
सुमुखि सुलोचनि! हर मुख पंच, तिलोचन।
बामदेव फुर नाम, काम-मद-मोचन॥
एकउ हरहिं न बर गुन, कोटिक दूषन।
नरकपाल, गजखाल, ब्याल, बिष भूषन॥
कहँ राउर गुन सील सरूप सुहावन।
कहाँ असंगल बेषु बिसेषु भयावन॥
जो सोचहिं ससिकलहिं सो सोचहिं रौरेहिं?
कहा मोर मन धरि न बरिय बर बौरेहिं॥
हिये हेरि हठ तजहु, हठै दुख पैहहु।
ब्याह-समय सिख मोर समुझि पछितैहहु॥

पछिताब भूत पिसाच प्रेत जनेत ऐहैं साजि कै।
जमधार सरिस निहारि सब नर नारि चलिहहिं भाजि कै॥
गज अजिन दिब्य दुकूल जोरत सखी हँसि मुँह मोरि कै।
कोउ प्रगट कोउ हिय कहिहि 'मिलवत अमिअ माहुर घोरि कै'॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तुमहिं सहित असवार बसह जब होइहहि ।
निरखि नगर नर-नारि बिहँसि मुख गोइहहिं" ॥
बटु करि कोटि कुतर्क जथा रुचि बोलइ ।
अचल-सुता-मन-अचल बयारि कि डोलइ ?
साँच सनेह साँचि रुचि जो हठि फेरइ ।
सावन सरित सिंधु रुख सूप सों घेरइ ॥
मनि बिनु फनि जलहीन मीन तनु त्यागइ ।
सो कि दोष गुन गनइ जो जेहि अनुरागइ ॥
करन कटुक बटु वचन बिसिष सम हिय हए ।
अरुन नयन चढ़ि भृकुटि, अधर फरकत भए ॥
बोली फिरि लखि सखिहि काँपु तनु थरथर ।
"आलि ! बिदा करु बटुहि बेगि, वड़ बरबर ॥
कहुँ तिय होहिं सयानि सुनहिं सिख राउरि ?
बौरेहिं के अनुराग भइउँ बड़ि बाउरि ॥
दोस निधान, इसानु सत्य सबु भाषेउ ।
मेटि को सकइ सो आँकु जो विधि लिखि राखेउ ॥
को करि वादि विवादु बिषादु बढ़ावइ ?
मीठ काहि कबि कहहिं जाहि जोइ भावइ ॥
भइ बड़ि बार आलि कहुँ काज सिधारहि ।
बकि जनि उठहि बहोरि, कुजुगुति सँवारहि ॥
जनि कहहि कछु बिपरीत जानत प्रीति रीति न बात की ।
सिव-साधु-निन्दकु मंद अति जो सुनै सोउ बड़ पातकी ॥"
सुनि वचन सोधि सनेहु तुलसी साँच अविचल पावनो ।
भए प्रगट करुना-सिंधु संकर, भाल-चंद्र सुहावनो ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सुन्दर गौर सरीर भूति भल सोहइ।
लोचन भाल बिसाल बदनु मनु मोहइ॥
सैल कुमारि निहारि मनोहर मूरति।
सजल नयन हिय हरषु पुलकु तनु पूरति॥
पुनि पुनि करै प्रनाम, न आवत कछु कहि।
"देखौं सपन कि सौतुख ससिसेखर, सहि!"॥
जैसे जनम-दरिद्र महामनि पावइ।
पेखत प्रगट प्रभावु प्रतीत न आवइ॥
सफल मनोरथ भयउ, गौरि सोइ सुठि॥
घर तें खेलन मनहुँ अबहि आई उठि॥

——

सबरी

(*गीतावली से*)

सबरी सोइ उठी, फरकत बाम बिलोचन बाहु।
सगुन सुहावन सूचत मुनि-मन-अगम उछाहु॥
मुनि-अगम उर आनंद, लोचन सजल, तनु पुलकावली।
तृन पर्नसाल बनाइ, जल भरि कलस, फल चाहन चली॥
मंजुल मनोरथ करति, सुमिरति बिप्र बर बानी भली।
ज्यों कल्प-बेलि सकेलि सुकृत सुफूल-फूली सुख-फली॥
प्रानप्रिय पाहुने ऐहैं राम लषन मेरे आजु।
जानत जन-जिय की मृदु चित राम गरीब निवाजु॥
मृदु चित गरीबनिवाज आजु बिराजिहैं गृह आइकै।
ब्रह्मादि संकर गौरि पूजित पूजिहौं अब जाइकै॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

लहि नाथ हौं रघुनाथ-बानो पतित पावन पाइकै।
दुहुँ ओर लाहु अघाहि तुलसी तीसरेहुँ गुन गाइकै॥
दोना रुचिर रचे पूरन कंद मूल फल फूल।
अनुपम अमियहु तें अंबक अवलोकत अनुकूल॥
सुन्दर सनेह सुधा सहस जनु सरस राखे सानिकै॥
छन भवन छन बाहर बिलोकति पंथ भू पर पानिकै।
दोउ भाइ आये शबरिका के प्रेम पन पहचानिकै॥
स्रवन सुनत चली आवत देखि लषन रघुराउ।
सिथिल सनेह कहै, 'है सपना बिधि कैधों सति भाउ'॥
सति भाउ कै सपनो ? निहारि कुमार कोसलराय के।
गहे चरन जे अघहरन नत-जन-बचन-मानस-काय के॥
लघु-भाग-भाजन उदधि उमग्यो लाभ सुख चित चाय के।
सो जननि ज्यों आदरी सानुज, राम भूखे भाय के॥
प्रेम पट पाँवड़े देत सुअरघ बिलोचन-वारि।
आस्रम लै दिए आसन पंकज-पायँ पखारि॥
पद-पंक जात पखारि पूजे पंथ-स्रम-विरहित भये।
फल फूल अंकुर मूल धरे सुधारि भरि दोना नये॥
प्रभु खात पुलकित गात, स्वाद सराहि आदर जनु जये।
फल चारिहू फल चारि दहि परचारि फल सबरी दये॥
सुमन बरषि हरषे सुर, मुनि मुदित सराहि सिहात।
केहि रुचि केहि छुधा सानुज माँगि-माँगि प्रभु खात॥
प्रभु खात माँगत देति सबरी राम भोगी जाग के।
पुलकत प्रसंसत सिद्ध सिव सनकादि भाजन भाग के॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बालक सुमित्रा कौसिला के पाहुने फल साग के।
सुनु समुझि तुलसी जानु रामहिं बस अमल अनुराग के॥
रघुबर अँचइ उठे सबरी करि प्रनाम कर जोरि।
हौं बलि बलि गई पुरई मंजु मनोरथ मोरि॥
पुरई मनोरथ स्वारथहु परमारथहु पूरन करी।
अघ अवगुनन्हि की कोठरी करि कृपा मुद मंगल भरी॥
तापस किरातिन कोल मृदु मूरति मनोहर मन धरी।
सिर नाइ आयसु पाइ गवने परम निधि पाले परी॥
सिय-सुधि सब कही नखसिख निरखि निरखि दोउ भाइ।
दै दै प्रदच्छिना करति प्रनाम न प्रेम अघाई॥
अति प्रीति मानस राखि रामहिं राम धामहिं सो गई।
तेहि मातु ज्यों रघुनाथ अपने हाथ जल अंजलि दई॥
तुलसी–भनित सबरी-प्रनति, रघुबर प्रकृति करुनामई।
गावत, सुनत, समुझत भगति हिय होय प्रभु पद नित नई॥

———————

(*विनय पत्रिका से*)

ऐसे राम दीन हितकारी।
अति कोमल करुनानिधान बिनु कारन पर-उपकारी॥
साधन हीन दीन निज अघ बस सिला भई मुनि नारी।
गृह तें गवनि परसि पद पावन घोर साप तें तारी॥
हिंसारत निषाद तामस बपु पसु समान बनचारी।
भेंट्यो हृदय लगाइ प्रेमबस नहिं कुल जाति बिचारी॥
जद्यपि द्रोह कियो सुरपति-सुत कहि न जाइ अति भारी।
सकल लोक अवलोकि सोक-हत सरन गए भय टारी॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बिहँग जोनि आमिष अहार-पर, गीध कौन व्रत धारी।
जनक समान क्रिया ताकी निज कर सब भाँति सँवारी॥
अधम जाति सबरी जोषित जड़ लोक वेद तें न्यारी।
जानि प्रीति दै दरस कृपानिधि सोउ रघुनाथ उधारी॥
कपि सुग्रीव बंधु भय-व्याकुल आयो सरन पुकारी।
सहि न सके दारुन दुख जन के हत्यो बालि सहि गारी॥
रिपु को अनुज बिभीषन निसिचर कौन भजन अधिकारी।
सरन गए आगे ह्वै लीन्हों भेंट्यो भुजा पसारी॥
असुभ होइ जिन के सुमिरे तें बानर रीछ बिकारी।
वेद बिदित पावन किए ते सब, महिमा नाथ तुम्हारी॥
कहँ लगि कहौं दीन अगनित जिन्ह की तुम बिपति निवारी।
कलिमल-ग्रसित दास तुलसी पर काहे कृपा बिसारी॥

मन पछितैहैं अवसर बीते।
दुर्लभ देह पाइ हरिपद भजु करम बचन अरु ही ते॥
सहसबाहु दस-बदन आदि नृप बचे न काल बली ते।
हम हम करि धन धाम सँवारे, अंत चले उठि रीते॥
सुत बनितादि जानि स्वारथ-रत न करु नेह सबही तें।
अंतहुँ तोहि तजैंगे, पामर ! तू न तजै अबही तें॥
अब नाथहिं अनुरागु जागु जड़ त्यागु दुरासा जी तें।
बुझै न काम-अगिनि तुलसी कहुँ विषय-भोग बहु घी तें॥

———

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

केशवदास

रामचन्द्रिका

(सीता के प्रति राम का उपदेश)

उठि रामचन्द्र लक्ष्मण समेत।
तब गये जनक तनया निकेत॥
राम—सुनु राजपुत्रिके एक बात॥
हम बन पठये हैं नृपति तात॥
तुम जननि सेव कहँ रहहु बाम।
कै जाहु आजु ही जनक धाम॥
सुनु चन्द्रवदनि गजगमनि ऐनि।
मम रुचै सो कीजै जलजनैनि॥
सीता—न हौं रहौं न जाहुँजू विदेह धाम को अवै।
कही जो बात मातु पै सो आज मैं सुनी सबै॥
लगे क्षुधाहि मा भली विपत्ति माँझ नारिये।
पियास त्रास नीर वीर युद्ध में सम्हारिये॥
लक्ष्मण—वन महँ विकट विविध दुख सुनिये।
गिरि गहवर मग अगमहिं गुनिये॥
कहुँ अहि हरि कहुँ निशिचर चरहीं।
कहुँ दव दहन दुसह दुख दहहीं॥
सीता—केशोदास नींद भूख प्यास उपहास त्रास।
दुख को निवास विप मुख हू गह्यो परै॥
वायु को वहन दिव दावा को दहन बड़ी।
बाड़वा अनल ज्वाल जाल में रह्यो परै॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जीरन जनम जात जोर जुर घोर पीर।
पूरण प्रकट परिताप क्यों कह्यो परै॥
सहिहौं तपन ताप पति के प्रताप रघु—
वीर को विरह वीर मोसों न सह्यो परै॥

(राम जटायु संवाद)

धीरज सों अपनो मन रोक्यो।
गीध जटायु पर्यो अवलोक्यो॥
छत्र ध्वजा रथ देखि कै बूझेउ।
गीध कहौ रण कौन सों जूझेउ॥
जटायु—रावण लै गयो राघव सीता।
हा रघुनाथ रटै शुभ गीता॥
मैं बिन छत्र ध्वजा रथ कीन्हों।
ह्वै गयो हौं बल पच्छ विहीनो॥
राम—साधु जटायु सदा बड़ भागी।
तो मन मो वपु सों अनुरागी॥
छुट्यो शरीर सुनी यह बानी।
रामहिं मैं तव ज्योति समानी॥
दिशि दक्षिण को करि दाह चले।
सरिता गिरि देखत वृक्ष भले॥
वन अंध कबंध विलोकत हीं।
दोउ सोदर खैंच लिये तब हीं॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

महाकवि भूषण

(१)

किबले के ठौर बाप बादशाह साहिजहाँ,
ताको कैद कियो मानो मक्के आग लाई है।
बड़ो भाई दारा वाको पकरि कै कैद कियो,
मेहरहु नाहिं माको जायो सगो भाई है॥
बन्धु तौ मुराद बक्स बादि चूक करिवे को,
बीच लै कुरान खुदा की कसम खाई है।
भूषन सुकवि कहै सुनो नवरंगजेब,
एते काम कीन्हें फेरि पादशाही पाई है।

(२)

हाथ तसबीह लिये प्रात उठि बन्दगी को,
आप ही कपट रूप कपट सु जप के।
आगरे में जाय दारा चौक में चुनाय लीन्हो,
छत्र हू छिनायो मनो बूढ़े मरे वप के॥
कीन्हो है सगोत-घात सो मैं नाहिं कहौं फेरि,
पील पै तोरायो चार चुगुल के गप के।
भूषन भनत छरछंदी मतिमन्द महा,
सौ सौ चूहे खाय कै बिलारी वैठी तप के॥

(३)

देवल गिरावते फिरावते निसान अली,
ऐसे डूबे राव राने सबी गये लबकी।
गौरा गनपति आप औरन को देत ताप,
आपके मकान सब मरि गये दबकी॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पीरा पयगंबर दिगंबरा दिखाई देत,
सिद्ध की सिधाई गई रही बात रबकी।
कासिहु के कला जाती मथुरा मसीत होती,
सिवाजी न होतो तौ सुनति होति सबकी ॥

(४)

कुम्भकर्न असुर औतारी अवरङ्गजेब,
कीन्ही कत्ल मथुरा दोहाई फेरी रबकी।
खोदि डारे देवी देव सहर मुहल्ला बाँके,
लाखन तुरुक कीन्हें छूटि गई तबकी ॥
भूषन भनत भाग्यो कासीपति विश्वनाथ,
और कौन गिनती मैं भूली गति भबकी।
चारौं वर्न धर्म छोड़ि कलमा नेवाज पढ़ि,
सिवाजी न होतो तौ सुनति होति सबकी ॥

(५)

गरुड़ को दावा सदा नाग के समूह पर,
दावा नाग-जूह पर सिंह सिरताज को।
दावा पुरहूत को पहारन के कुल पर,
पच्छिन के गोल पर दावा सदा बाज को ॥
भूषन अखंड नवखंड महिमंडल मैं,
तम पर दावा रवि किरन समाज को।
पूरब पछाँह देस दच्छिन ते उत्तर लौं,
जहाँ पादसाही तहाँ दावा सिवराज को ॥

(६)

वेद राखे विदित पुरान राखे सारयुत,
राम नाम राख्यो अति रसना सुघर मैं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हिन्दुन की चोटी रोटी राखी है सिपाहिन की,
काँधे मैं जनेऊ राख्यो माला राखी गर मैं।
मीड़ि राखै मुगल मरोड़ि राखे पातसाह,
बैरी पीसि राखे वरदान राख्यो कर मैं।
राजन की हद्द राखी तेग बल सिवराज,
देव राखे देवल स्वधर्म राख्यो घर मैं॥

(७)

इन्द्र जिमि जम्भ पर बाड़व सुअम्भ पर,
रावन सदम्भ पर रघुकुलराज है।
पौन बारिबाह पर सम्भु रतिनाह पर,
ज्यों सहसबाहु पर राम द्विजराज है॥
दावा द्रुमदण्ड पर चीता मृगभुण्ड पर,
भूषन वितुण्ड पर जैसे मृगराज है।
तेज तम अंस पर कान्ह जिमि कंस पर,
त्यों मलेच्छ वंस पर सेर सिवराज है॥

महाकवि बिहारी लाल

मैं समुझ्यौ निरधार, यह जगु काँचों काँच सो।
एकै रूपु अपार, प्रतिबिम्बित लखियतु जहाँ॥ १॥
को छूट्यौ एहि जाल परि कत कुरङ्ग अकुलात।
ज्यौं ज्यौं सुरभि भज्यौ चहत त्यौं त्यौं उरझत जात॥ २॥
कनक कनक तैं सौगुनी मादकता अधिकाइ।
ओहि खाए बौराइ इहिं पाए ही बौराइ॥ ३॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

या भव पारावार कौं उलँघि पार को जाइ।
तिय छवि छायाग्राहिनी ग्रहै बीचहीं आइ ॥ ४ ॥
जम करि मुँह तरहरि पर्यौ इहिं धरहरि चित लाउ।
विषय तृषा परिहरि अजौं नरहरि के गुन गाउ ॥ ५ ॥
जगतु जनायौ जिहिं सकलु सो हरि जान्यौ नाहिं।
ज्यौं आँखिन सबु देखियै आँखि न देखी जाहिं ॥ ६ ॥
भजन कह्यौ तातैं भज्यौ भज्यौ न एकौ बार।
दूरि भजन जातैं कह्यौ सो तैं भज्यौ गँवार ॥ ७ ॥
ब्रजबासिनु को उचित धनु जो धन रुचि तन कोइ।
सु चित न आयौ सुचितई कहौ कहाँ तैं होइ ॥ ८ ॥
तौ लगु या मन सदन मैं हरि आवैं किहिं बाट।
विकट जटे जो लगु निपट खुलैं न कपट कपाट ॥ ९ ॥
दूरि भजत प्रभु पीठि दै गुन विस्तारन काल।
प्रगटत निर्गुन निकट ही चंग रंग गोपाल ॥ १० ॥
जप माला छापा तिलक सरै न एकौ कामु।
मन काँचै नाचै वृथा साँचै राँचै रामु ॥ ११ ॥
यह विरियां नहिं और की तू करिया वह सोधि।
पाहन नाव चढ़ाइ जिहिं कीने पार पयोधि ॥ १२ ॥
लटुवा लौं प्रभु कर गहैं निगुनी गुन लपटाइ।
वहै गुनी करतैं छुटैं निगुनीयै ह्वै जाइ ॥ १३ ॥
जाकैं एकाएक हूँ जग ब्यौसाइ न कोइ।
सो निदाघ फूलै फरै आकु डहडहो होइ ॥ १४ ॥
अपनैं अपनैं मत लगे बादि मचावत सोरु।
ज्यौं त्यौं सबकौं सेइबौ एकै नन्दकिसोरु ॥ १५ ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कोऊ कोरिक संग्रहौ कोऊ लाख हजार।
मो संपति जदुपति सदा बिपति बिदारनहार ॥ १६ ॥
थोरे ही गुन रीझते बिसराइ वह बानि।
तुमहूँ कान्ह मनौ भए आजु कालिह के दानि ॥ १७ ॥
कब को टेरतु दीन रट होत न स्याम सहाइ।
तुमहूँ लागी जगत गुरु जग नायक जग बाइ ॥ १८ ॥
बँधु भये का दीन के को तारयौ रघुराइ।
तूठे तूठे फिरत हौ झूठे बिरद कहाइ ॥ १९ ॥
कौन भाँति रहि है बिरदु अब देखिबी मुरारि।
बीवे मोसौं आइ कै गीवे गीधहि तारि ॥ २० ॥
ज्यौं है हौ तो होहुगे हौं हरि अपनी चाल।
हठु न करो अति कठिन है मो तारिबौ गुपाल ॥ २१ ॥
करौ कुबत जगु कुटिलता तजौ न दीनदयाल।
दुखी होहुगे सरल हिय बसत त्रिभंगी लाल ॥ २२ ॥
मोहिं तुम्हैं बाढ़ी बहस को जीतै जदुराज।
अपनैं अपनैं बिरद की दुहूँ निवाहन लाज ॥ २३ ॥
कीजै चित सोई तरे जिहिं पतितनु के साथ।
मेरे गुन औगुन गुननु गनौ न गोपीनाथ ॥ २४ ॥
मोहू दीजै मोषु, ज्यौं अनेक अधमनु दियौ।
जौ बाँधै ही तोषु तौ बाँधौ अपने गुनानि ॥ २५ ॥
निज करनी सकुचेहिं कत सकुचावत इहिं चाल।
मोहूँ से नित बिमुख के सनमुख रहि गोपाल ॥ २६ ॥
हरि की जति बिनती यहै तुम सौं बार हजार।
जिहिं तिहिं भाँति डर्यो रहौं पर्यो रहौं दरबार ॥ २७ ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कवि वृन्द

बुरे लगत सिख के बचन, हिये विचारो आप।
करुये भेषज बिन पिये, मिटे न तन को ताप॥ १॥
फेर न ह्वै है कपट सों, जो कीजे ब्यौपार।
जैसे हाँड़ी काठ की, चढ़े न दूजी बार॥ २॥
नैना देत बताय सब, हिय को हेत अहेत।
जैसे निर्मल आरसी, भलो बुरो कहि देत॥ ३॥
अति परिचै ते होत है, अरुचि अनादर भाय।
मलयागिरि की भीलनी, चन्दन देत जराय॥ ४॥
मधुर बचन ते जात मिटि, उत्तम जन अभिमान।
तनिक सीत जल सों मिटै, जैसे दूध उफान॥ ५॥
कछु बसाय नहिं सबल सों, करै निबल सो जोर।
चलै न अचल उखारि तरु, डारति पवन झकोर॥ ६॥
मान होत है गुननि ते, गुन बिन मान न होय।
सुक सारिक राखै सबै, काग न राखै कोय॥ ७॥
जो सब ही को देत है, दाता कहिये सोइ।
जलधर बरखत सम विषम, थल न विचारत कोइ॥ ८॥
स्वारथ के सब ही सगे, बिन स्वारथ कोउ नाहिं।
जैसे पंछी सरस तरु, निरस भये उड़ि जाहिं॥ ९॥
सुख बीते दुख होत है, दुख बीते सुख होत।
दिवस गये ज्यों निसिउदित, निसिगत दिवस उदोत॥ १०॥
पर घर कबहूँ न जाइये, गये घटत है ज्योति।
रवि-मण्डल में जात ससि, छीन कला छवि होति॥ ११॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

औरहिं ते कोमल प्रकृति, सज्जन परम दयाल।
कौन सिखावत है कहो, राजहंस कौं चाल॥ १२॥
जिहिं प्रसंग दूषन लगै, तजिये ताको साथ।
मदिरा मानत है जगत, दूध कलाली हाथ॥ १३॥
जाके सँग दूषन दुरे, करियै तिहिं पहिचानि।
जैसे समझै दूध सब, सुरा अहिर के पानि॥ १४॥
मूढ़ तहाँ ही मानिये, जहाँ न पण्डित होय।
दीपक को रवि के उदै, बात न पूछे कोय॥ १५॥
जैसी ही भवितव्यता, तैसी बुद्धि प्रकास।
सीता हरिवे ते भयो, रावन कुल को नास॥ १६॥
कछू सहाय न चलि सकै, होनहार के पास।
भीष्म युधिष्ठिर से तहाँ, भो कुरुवंस विनास॥ १७॥
दुर्जन के संसर्ज ते, सज्जन लहत कलेस।
ज्यों दशमुख अपराध से, बन्धन लह्यो जलेस॥ १८॥
निपट अबुध समझै कहा, बुध जन वचन बिलास।
कबहूँ भेक न जानहीं, अमल कमल की बास॥ १९॥
कारज धीरे होत है, काहे होत अधीर।
समय पाय तरुवर फलै, केतक सींचौ नीर॥ २०॥
क्यों कीजै ऐसो जतन, जाते काज न होय।
परवत पै खोदै कुँवा, कैसे निकसै तोय॥ २१॥
अरि के संग कुटुम्ब लखि, जिय उपजत है त्रास।
लागे बेंट कुठार मैं, तरु को होत विनास॥ २२॥
सबते लघु है माँगिबौ, या में फेर न सार।
बलि पै जाँचत ही भये, वामन तन करतार॥ २३॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

नाम भलो होत न भलो, भलो भाग जिहि भाल।
लच्छि नाम माँगत फिरै, भूखो ना भूपाल ॥ २४ ॥
तिन के कारज होत हैं, जिन के बड़े सहाय।
कृष्ण पच्छ पाण्डव भये, कौरव गये बिलाय ॥ २५ ॥
सब देखै पै आपनो, दोष न देखै कोइ।
करै उँजेरो दीप पै, तरे अँधेरो होइ ॥ २६ ॥
संत कष्ट सह अति सुखी, राखे राख समीप।
आय जरै तउ और को, करै उँजेरो दीप ॥ २७ ॥
सुख दिखाय दुख दीजिये, खल सों लरिये काहि।
जो गुर दीने ही मरै, क्यों विष दीजै ताहि ॥ २८ ॥
बूझे ही ते जानियै, बुध मूरख गुन माहिं।
छलकै ओछे नीर घट, पूरे छलकत नाहिं ॥ २९ ॥
सुन्दर थान न छोरिये, जौ लों होय न और।
पिछलो पाँव उठाइये, देखि धरनि को ठौर ॥ ३० ॥
सब सुख है संतोष में, धरियै मन संतोष।
नेक न दुर्बल होत है, सर्प पवन के पोष ॥ ३१ ॥
कहबो कछु करबो कछु, है जग की विधि दोय।
देखन के अरु खान के, और दुरद रद होय ॥ ३२ ॥
ठीक किये बिन और की, बात साँच मत थर्प।
होत अँधेरी रैन में, परी जेंवरी सर्प ॥ ३३ ॥
बड़े जो चाहें सो करैं, करन मतों उर-धारि।
हरि गिरि तारे जलधि पर, करी शिला ते नारि ॥ ३४ ॥
बिना दिये न मिलै कछू, यह समझै सब कोय।
होत सिसिर मैं पात तरु, सुरभि सुपल्लव होय ॥ ३५ ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वृद्धि न ह्वै है पाप ते, वृद्धि धरम ते धार।
सुन्यो न देख्यो सिंह के, मृग को सो परिवार ॥ ३६ ॥
खाय न खर्चै सूम धन, चोर सबै लै जाय।
पीछे ज्यों मधुमच्छिका, हाथ मलै पछिताय ॥ ३७ ॥
सबसों आगे होय के, कबहुँ न करिये बात।
सुधरे काज समान फल, बिगरे गारी खात ॥ ३८ ॥
धन अरु गेंद जु खेल को, दोऊ एक सुभाय।
कर में आवत छिनक में, छिन में कर ते जाय ॥ ३९ ॥
प्रभु को चिंता सबन की, आपुन करिये नाहिं।
जनम अगाऊ भरत है, दूध मात थन माँहिं ॥ ४० ॥
दुष्ट रहै जा ठौर पर, ताको करै बिगार।
आगि जहाँ ही राखिये, जारि करै तिहि छार ॥ ४१ ॥
जानि बूझि अजगुत करै, तासों कहा बसाय।
जागत ही सोवत रहै, तिहिं को सकै जगाय ॥ ४२ ॥
कबहुँ प्रीति न जोरिये, जोरि तोरिये नाहिं।
ज्यों तोरे जोरे बहुरि, गाँठ परति गुन माहिं ॥ ४३ ॥
काहू को हँसिये नहीं, हँसी कलह को मूल।
हाँसी ही ते भयो है, कौरव कुल निरमूल ॥ ४४ ॥
कहे वचन पलटे नहीं, जे सत पुरुष सधीर।
कहत सबै हरिचन्द नृप, भरयो नीच घर नीर ॥ ४५ ॥
मति फिरि जाय विपत्ति में, राव रंक इक रीत।
हेम हिरन पाछे गये, राम गँवाई सीत ॥ ४६ ॥
सरस्वति के भंडार की, बड़ी अपूरब बात।
ज्यों खरचे त्यों त्यों बढ़ै, बिन खरचे घटि जात ॥ ४७ ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

देखत है जग जातु है, तउ ममता सों मेल।
जानतु हौं या जगत में, देखत भूलो खेल ॥ ४८ ॥
गहत तत्त्वज्ञानी पुरुष, बात विचार बिचारि।
मथनिहारि तजि छाँछ को, माखन लेत निकारि ॥ ४९ ॥
श्रवण करी त्यों कीजिये, मात पिता की सेव।
काँधे काँवरि लै फिर्यों, पूजे जैसे देव ॥ ५० ॥
जपत एक हरि नाम ते, पातक कोटि बिलाय।
जैसहिं कनका आगि ते, घास ढेर जरि जाय ॥ ५१ ॥
कहा बड़े छोटे कहा, जहँ हित तहँ चित लागि।
हरि भोजन किय विदुर घर, दुरयोधन को त्यागि ॥ ५२ ॥
इक बिन माँगे ही लहैं, माँगे एक लहै न।
घन जल सर सरिता भरै, चातक चोंच भरै न ॥ ५३ ॥

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

गंगा-वर्णन

नव उज्ज्वल जलधार हार हीरक-सी सोहति।
बिच बिच छहरति बूँद मध्य मुक्ता-मनि पोहति ॥
लोल लहर लहि पवन एक पै इक इमि आवत।
जिमि-नर-गन मन विविध मनोरथ करत मिटावत ॥ १ ॥
सुभग-स्वर्ग-सोपान-सरिस सब के मन भावत।
दरसन मज्जन पान त्रिविध भय दूरि मिटावत ॥
श्रीहरि-पद-नख-चन्द्रकान्त मन द्रवित सुधारस।
ब्रह्म कमण्डल-मण्डन भव खण्डन सुर सरवस ॥ २ ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

शिव-सिर-मालति–माल भगीरथ नृपतिपुण्य-फल ।
ऐरावत-गज-गिरिपति-हिम–नाग-कण्ठहार कल ॥
सगर-सुवन सठ सहस परस जल मात्र उधारन ।
अगिनित धारा रूप धारि सागर संचारन ॥ ३ ॥
कासी कहँ प्रिय जानि ललकि भेट्यो जगधाई ।
सपनेहूँ नहिं तजी रही अङ्कम लपटाई ॥
कहूँ बँधे नव घाट उच्च गिरिवर सम सोहत ।
कहुँ छतरी कहुँ मढ़ी बढ़ी मन मोहत जोहत ॥ ४ ॥
धवल धाम चहुँ ओर फरहरत धुजा पताका ।
घहरत घंटा धुनि धमकत धौंसा करि साका ॥
मधुरी नौबत बजत कहूँ नारी नर गावत ।
वेद पढ़त कहुँ द्विज कहुँ जोगी ध्यान लगावत ॥ ५ ॥
कहुँ सुन्दरी नहात नीर कर जुगल उछारत ।
जुग अम्बुज मिलि मुक्त गुच्छ मनु सुच्छ निकारत ॥
धोवत सुन्दरि बदन करन अति ही छबि पावत ।
वारिधि नाते ससि-कलंक मनु कमल मिटावत ॥ ६ ॥
सुन्दर ससिमुख नीर मध्य इमि सुन्दर सोहत ।
कमल बेलि लहलही नवल कुसुमन मन मोहत ॥
दीठि जहीं जहँ जात रहत तितहीं ठहराई ।
गंगा–छबि हरिचन्द कछू बरनी नहिं जाई ॥ ७ ॥

(१)

जग सूरज चंद टरैं तो टरैं पै न सज्जन नेहु कबौं बिचलैं ।
धन संपति सर्वस गेहु नसौ नहिं प्रेम की मेंड़ सो एंड टलै ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सतवादिन को तिनका सम प्रान रहै तो रहै वा ढलै तो ढलै ।
निज मीत की प्रीति प्रतीत रहौ इक और सबै जग जाउ भलै ।।

(२)

जगत मैं घर की फूट बुरी ।
घर के फूटहिं सों विनसाई सुवरन लंकपुरी ।।
फूटहिं सों सब कौरव नासे भारत युद्ध भयो ।
जाको घाटो या भारत मैं अबलौं नहिं पुजयो ।।
फूटहिं सों जयचंद बुलायो जवनन भारत धाम ।
जाको फल अबलौं भोगत सब आरज होइ गुलाम ।।
फूटहिं सों नव नन्द विनासे गयो मगध को राज ।
चन्द्रगुप्त को नासन चाह्यौ आपु नसे सह साज ।।
जो जग मैं धन मान और बल अपुनो राखन होय ।
तो अपुने घर मैं भूलेहूँ फूट करौ मति कोय ।।

(३)

कहँ गये विक्रम भोज राम बलि कर्ण युधिष्ठिर ।
चन्द्रगुप्त चाणक्य कहाँ नासे करि कै थिर ।।
कहँ क्षत्री सब मरे विनसि सब गये कितै गिर ।
कहाँ राज को तौन साज जेहि जानत है चिर ।।
कहँ दुर्ग सैन धन बल गयो, धूरहिं धूर दिखात जग ।
उठि अजौं न मेरे वत्सगन, रच्छहिं अपुनो आर्य मग ।।

(४)

भरोसो रीझन ही लखि भारी ।
हमहूँ को विस्वास होत है मोहन पतित उधारी ।।
जो ऐसे सुभाव नहिं हो तो क्यों अहीर कुल भायो ।
तजि कै कौस्तुभ सो मनि गल क्यों गुञ्जा हार धरायो ।।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

क्रीट मुकुट सिर छोड़ि पखौआ मोरन को क्यों धार्यो ।
फेंट कसी टेंटिन पै मेवन को क्यों स्वाद बिसार्यो ॥
ऐसी उलटी रीझ देखि के उपजत है जिय आस ।
जग निन्दित हरिचन्दहुँ को अपनावहिंगे करि दास ॥

भारत दुर्दशा

रोअहु सब मिलिकै आवहु भारत भाई ।
हा ! हा ! भारत दुर्दशा न देखी जाई ॥ ध्रुव ॥
सबके पहले जेहि ईश्वर धन बल दीनो ।
सबके पहिले जेहि सभ्य विधाता कीनो ॥
सबके पहले जो रूप रंग रस भीनो ।
सबके पहिले विद्याफल जिन गहि लीनो ॥
अब सबके पीछे सोई परत लखाई ।
हा हा ! भारत दुर्दशा न देखी जाई ॥
जहँ भए शाक्य हरिचंदरु नहुप ययाती ।
जहँ राम युधिष्ठिर वासुदेव सर्याती ॥
जहँ भीम करन अर्जुन की छटा दिखाती ।
तहँ रही मूढ़ता कलह अविद्या राती ॥
अब जहँ देखहु तहँ दुःखहि दुःख दिखाई ।
हा ! हा ! भारत दुर्दशा न देखी जाई ॥
लरि वैदिक जैन डुबाई पुस्तक सारी ।
करि कलह बुलाई यवन सैन पुनि भारी ॥
तिन नासी बुधि बल विद्या धन बहु बारी ।
छाई अब आलस कुमति कलह अँधियारी ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

भए अंध पंगु सब दीन हीन बिलखाई।
हा! हा! भारत दुर्दशा न देखी जाई॥
अँगरेज राज सुख साज सजे सब भारी।
पै धन बिदेस चलि जात इहै अति ख्वारी॥
ताहू पै मँहगी काल रोग बिस्तारी।
दिन दिन दूने दुख ईस देत हा हा री॥
सब के ऊपर टिक्कस की आफत आई।
हा! हा! भारत दुर्दशा न देखी जाई॥

---

(१)

साधो मनवाँ अजब दिवाना।
माया मोह जनम के ठगिया तिनके रूप लुभाना॥
छल परपंच करत जग धूनत दुख को सुख करि माना।
फिकिरि तहाँ की तनिक नहीं है अन्त समय जहँ जाना॥
मुख ते धरम धरम गोहरावत करम करत मनमाना।
जो साहब घट घट की जानै तेहितैं करत बहाना॥
तेहितैं पूछत मारग घर को आपहि जौन भुलाना।
'हियाँ कहाँ सज्जन कर बासा' हाय न इतनौ जाना॥
यहि मनुवाँ के पीछे चलि के सुख का कहाँ ठिकाना।
जो "परताप" सुखद को चीन्हे सोइ परम सयाना॥

(२)

जागो भाई जागो रात अब थोरी।
काल चोर नहिं करन चहत है जीवन धन की चोरी॥
औसर चूके फिर पछितैहौ हाथ मींजि सिर फोरी।
काम करो नहिं काम न ऐहैं बातें कोरी कोरी॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जो कछु बीती बीत चुकी सो चिन्ता ते मुख मोरी।
आगे जामें बनै सो कीजै करि तन मन इक ठौरी॥
कोऊ काहू को नहिं साथी मात पिता सुत गोरी।
अपने करम आपने संगी और भावना भोरी॥
सत्य सहायक स्वामि सुखद से लेहु प्रीति जिय जोरी।
नाहिं तु फिर "परतापहरी" कोऊ बात न पूछहि तोरी॥

पं० प्रताप नारायण मिश्र

प्रार्थना

शरणागत पाल कृपाल प्रभो! हम को इक आस तुम्हारी है।
तुम्हरे सम दूसर और कोऊ नहिं दीनन को हितकारी है॥
सुधि लेत सदा सब जीवन की अति ही करुना बिस्तारी है।
प्रतिपाल करैं बिन ही बदले अस कौन पिता महतारी है॥
जब नाथ दया करि देखत हो छुटि जात बिथा संसारी है।
बिसराय तुम्हें सुख चाहत जो अस कौन नदान अनारी है॥
परवाह तिन्हें नहिं स्वर्गहुँ की जिनको तव कीरति प्यारी है।
धनि हैं धनि हैं सुखदायक जो तव प्रेमसुधा अधिकारी है॥
सब भाँति समर्थ सहायक हौ तव आश्रित बुद्धि हमारी है।
"परताप नारायण" तौ तुम्हरे पद पंकज पै बलिहारी है॥
पितु मातु सहायक स्वामि सखा तुम ही इक नाथ हमारे हौ।
जिनके कछु और अधार नहीं तिनके तुम ही रखवारे हौ॥
सब भाँति सदा सुखदायक हौ दुख दुर्गुन नासन हारे हौ।
प्रतिपाल करो सगरे जग को अतिसै करुना उर धारे हौ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

भुलि हैं हम ही तुमको तुम तो हमरी सुधि नाहिं बिसारे हौ।
उपकारन को कछु अंत नहीं छिन ही छिन जो बिस्तारे हौ॥
महाराज महा महिमा तुम्हारी समुझैं बिरलै बुधिवारे हौ।
शुभ शान्ति निकेतन प्रेमनिधे! मन मन्दिर के उजियारे हौ॥
यहि जीवन के तुम जीवन हौ इन प्रानन के तुम प्यारे हौ।
तुम सों प्रभु पाय "प्रताप हरी" किहि के अब और सहारे हौ॥

श्री नाथूराम शंकर शर्मा

प्रशस्त पाठ

शुभ सत्य सनातनधर्म वही
जिसमें मत-पन्थ अनेक नहीं।
बल-वर्द्धक वेद वही जिस में
उपदेश अनर्थक एक नहीं॥
सुख-मूल समाधि वही जिस में
व्रत-बन्धन की कुछ टेक नहीं॥
कवि शंकर बुद्धि विशुद्ध वही
जिस के मन में अविवेक नहीं॥१॥
गुरु गौरव-हीन कुचाल चलें
मत-भेद पसार प्रपंच रचें।
दिन रात मनोमुख मूढ़ लड़ें
चहुँ ओर घने घमसान मचें॥
व्रत साधन के मिष पाप करें
हठ छोड़ न हाय! लबार लचें।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कवि शंकर मोह महासुर से
बिरले जन पाय विवेक बचें ॥ २ ॥
तन सुन्दर रोग विहीन रहे
मन त्याग उमंग उदास न हो।
रसना पर धर्म—प्रसंग बसें
नर-मण्डल में उपहास न हो॥
धन की महिमा भरपूर मिले
रस-रङ्ग वियुक्त विलास न हो।
कवि शंकर ये सब संकट हैं
सुखदा प्रतिभा यदि पास न हो॥ ३ ॥
निशि-वासर भोग-विलास किये
रस-रंग भरे सब साज बने।
सिर धार किरीट कृपाण गही
अवनी भर के अधिराज बने॥
अनुकूल अखण्ड प्रताप रहा
अविरुद्ध अनेक समाज बने।
कवि शंकर वैभव ज्ञान बिना
भवसागर के न जहाज बने॥ ४ ॥
कब कौन अगाध पयोनिधि के
उस पार गया जलयान बिना?
मिल प्राण अपान उदान रहें
न समान विमिश्रित व्यान बिना॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कहिये ध्रुव ध्येय मिला किस को
अविकल्प अचञ्चल ध्यान बिना ।
कवि शंकर मुक्ति मिली न कहीं
सुख मूल विवेकज ज्ञान बिना ॥ ५ ॥

ब्रह्मचर्य–महिमा

(महावीर हनुमान)

सुग्रीव का सुमित्र बड़े काम का रहा ।
प्यारा अनन्य भक्त सदा राम का रहा ॥
लंका जलाय काल खलों को सुझा दिया ।
मारे प्रचंड दुष्ट दिया भी बुझा दिया ॥
हनुमान बली वीर-वरों में प्रधान है ।
महिमा अखंड ब्रह्मचर्य की महान है ॥

(राजर्षि भीष्म पितामह)

भूला न किसी भाँति कड़ी टेक टिकाना ।
माना मनोज का न कहीं ठीक ठिकाना ॥
जीते असंख्य शत्रु रहा दर्प दिखाता ।
शय्या शरों की पाय मरा धर्म सिखाता ॥
अब एक भी न भीष्म बली सा सुजान है ।
महिमा अखंड ब्रह्मचर्य की महान है ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

स्व० राय देवी प्रसाद 'पूर्ण'

पूर्ण-संग्रह में से

(वर्षा का आगमन)

(१)

सुखद सीतल सुचि सुगंधित पवन लागी बहन,
सलिल बरसन लगो बसुधा लगी सुखमा लहन।
लहलही लहरान लागी सुमन-बेली मृदुल,
हरित कुसुमित लगे झूमन बिरिछ मंजुल बिपुल॥

(२)

हरित मनि के रंग लागी भूमि मन को हरन,
लसत इन्द्रवधून अवली छटा मानिक बरन।
बिमल बगुलन पाँति मनहुँ विसाल मुक्तावली,
चन्द्रहास समान चमकत चंचला त्यों भली॥

(३)

नील नीरद सुभग सुरधनु बलित सोभा-धाम,
ललित मनु बनमाल धारे लसत श्री घनस्याम।
कूप कुंड गँभीर सरवर नीर लाग्यो भरन,
नदी नद उफनान लागे लगे झरने झरन॥

(४)

रटन लागे त्रिविध दादुर रुचित चातक-बचन,
कूक छावत मुदित कानन लगे केकी नचन।
मेघ गरजत मनहुँ पावस-भूप को दल सबल,
विजय-दुँदुभि हनत जग में छीनि ग्रीसम अमल॥

———

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गंगाजी की शोभा

चामर-सी चंदन-सी चंद्रिका-सी चंद ऐसी,
चाँदनी चमेली चारु चाँदी सी सुघर है,
कुंद-सी, कुमुद-सी, कपूर-सी, कपास-ऐसी,
कल्पतरु-कुसुम-सी, कीरति-सी बर है।
'पूरन' प्रकास-ऐसी काँस-ऐसी हास ऐसी,
सुख के-उपास ऐसी सुखमा की घर है,
पाप को जहर-ऐसी कलि को कहर-ऐसी,
सुधा की छहर-ऐसी गंगा की लहर है॥

——

गंगाजी की महिमा

हाँ देखो कैसी धवल जल-धारा !
गंगा सुमन मंदाकिनी धाई धूम-धाम से,
सुधा-सी देव धाम से सिधाई धरातल धारा।
ब्रह्म कमंडल अमल हिमांचल,
आर्यधरा, कांतिकरा, जाय राजी समुद्र अपारा॥
सत्य सतोगुन सुखमाकारी;
अमित चंद्र की-सी उजियारी,
देव सरी क्षेमकरी, तारि देती कलुष परिवारा।
'पूरन' संत तपस्वी सज्जन,
करि-करि दरस परस अरु मज्जन;
पातक खोवैं, प्रमुदित होवैं,
पावैं शांति सुख-सारा।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

याही के किनारे धारे,
ईश्वर को ध्यान पारे,
योग के करने हारे, सेवैं बन को।
शंकर के रंग ऐसी,
सत्य के उमंग ऐसी;
गंगा की तरंग पै, झुलावैं मन को ॥

—:—

मन-बंदर

तुझे पहिचाना मैंने बंदर,
कूदा फिरता है त्रिभुवन में, बँधा भवन के अंदर।
तू बाजीगर जादूगर है, बहुरूपिया कलंदर;
छोटा कभी कभी तू भारी, मच्छर कभी मछंदर ॥
कभी सवार कभी तू पैदल, दारा कभी सिकंदर;
कभी महंत संत गुरु चेला, कभी कुबेर पुरंदर।
कभी कुदै राई से दबकर, कभी ढ़हावै मंदर;
जल में कभी आग में बिचरै, मगरा कभी समंदर ॥
अरे अनारी तू मछली है, है यह अगम समंदर;
उछल-कूद, निष्फल विचार निज 'पूरन' त्याग न कंदर ॥

—:—

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पं० श्रीधर पाठक

सुसन्देश

कहीं पै स्वर्गीय कोई बाला सुमञ्जु वीणा बजा रही है।
सुरों के संगीत की सी कैसी सुरीली गुञ्जार आ रही है॥
हरेक स्वर में नवीनता है, हरेक पद में प्रवीणता है।
निराली लय है औ लीनता है अलाप अद्भुत मिला रही है॥
अलक्ष्य पर्दों से गत सुनाती तरल तरानों से मन लुभाती।
अनूठे अटपट स्वरों में स्वर्गिक सुधा की धारा बहा रही है॥
कोई पुरन्दर की किंकिरी है किम्वा किसी सुर की सुन्दरी है।
वियोग-तप्ता-सी भोग-मुक्ता हृदय के उद्गार गा रही है॥
कभी नई तान प्रेममय है, कभी प्रकोपन कभी विनय है।
दया है, दाक्षिण्य का उदय है, अनेकों बानक बना रही है॥
भरे गगन में हैं जितने तारे हुवे हैं मदमस्त गत पै सारे।
समस्त ब्रह्माण्ड भर को मानों दो उंगलियों पर नचा रही है॥
सुनो तो सुनने की शक्ति वालो, सको तो जाकर के कुछ पता लो।
है कौन जोगन, ये जो गगन में कि इतनी चुलबुल मचा रही है॥

स्मरणीय भाव

वन्दनीय वह देश, जहाँ के देशी निज-अभिमानी हों।
बान्धवता में बँधे परस्पर परता के अज्ञानी हों॥
निन्दनीय वह देश जहाँ के देशी निज-अज्ञानी हों।
सब प्रकार परतन्त्र पराई प्रभुता के अभिमानी हों॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

भारत-सुत

पहो ! नव युग वर, प्रिय छात्र-वृन्द !
भारत-हृदि-नन्दन, आनन्द-कन्द !!
जीवन-तरु-सुन्दर-सुख-फल अमन्द !
भारत-उर--आशा--आकाश-चन्द !!
आरज-गृह-गौरव--आधार-थम्ब !
भार-भुवि-सर्वस प्रानावलम्ब !!
तुम ही तिहि तन, मन, धन, रजत-जोति!
हीरा, मनि, मरकत, मानिक्य, मोति !!
तुम ही तिहि आतम-अन्तर-शरीर !
प्रानाधिक-प्रियतम सुत, धीर, वीर !!
तुम्हरे नव विकसित सुठि सबल अंग !
उन्नत मति चंचल चित, चपल ढंग !!
शैशव-गुन-संभव, नव नव तरङ्ग !
नव वय, नव विद्या, नव-युग-उमङ्ग !!
बाढ़हु भुवि स्वर्गिक सेवा के हेतु !
फहरै जग भारत-कीरति को केतु !!

प्रेम

प्रेम मय है, सारा संसार ।
प्रेमहि का सारा प्रसार है, मत कह इसे असार ।।
प्रेम वार है, प्रेम पार है, प्रेमहि है मँझधार ।
बेड़ा पड़ा प्रेम-सागर में, प्रेम से होगा पार ।।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

प्रेमहि है स्वारथ परमारथ, सकल पदारथ सार।
प्रेम विलग जो तेरे मन में, वो है प्रेम विकार॥
हो जा निडर, छोड़ दे गड़बड़, पकड़ प्रेम की धार।
प्रेम के बल से केवल होगा निबल तेरा निस्तार॥

——

बन-शोभा

चारु हिमाचल आँचल में एक साल बिसालन कौ बन है।
मृदु मर्मरशील झरैं जल-स्रोत है पर्वत-ओट है, निर्जन है॥
लिपटे हैं लता द्रुम, गान में लीन प्रवीन विहंगन कौ गन है।
भटक्यौ तहँ बावरौ भूल्यौ फिरै, मद बावरो सौ अलि को मन है।
भारत में वन! पावन तू ही, तपस्वियों का तप-आश्रम था।
जग तत्व की खोज में लग्न जहाँ ऋषियों ने अभग्न किया श्रम था॥
जब प्राकृत विश्व का विभ्रम और था, सात्विक जीवन का क्रम था।
महिमा बन-वास की थी तब और प्रभाव पवित्र अनूपम था॥

———

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पं० अयोध्या सिंह उपाध्याय

अभेद का भेद

दोहा

खोजे खोजी को मिला क्या हिन्दू क्या जैन।
पत्ता पत्ता क्या हमें पता बताता है न? १ ॥
रँगे रंग में जब रहे सकें रंग क्यों भूल।
देख उसी की ही फबन फूल रहे हैं फूल ॥ २ ॥
क्या उसकी है सोहती नहीं नयन में सोत।
क्या जग में है जग रही नहीं जागती जोत ॥ ३ ॥
पूजन जोग जिसे कहें पूजित-जन बन-दास।
उसे नहीं जो पूजते तो क्यों पूजे आस ॥ ४ ॥
आव भगत उसका करें पूजें पाँव सचाव।
सब से ऊँचा जो रहा रख कर ऊँचे भाव ॥ ५ ॥
बिना बीज क्यों बेलि हो बिना तिलों क्यों तेल।
किसी खेलाड़ी के बिना है न जगत का खेल ॥ ६ ॥
क्या निर्गुन है? है भला किसको निर्गुन ज्ञान।
गुण वाले जो कर सकें करें सगुण गुण गान ॥ ७ ॥
चित भीतर ही है नहीं जो चित रहे सचेत।
कला दिखाता क्या नहीं बाहर कलानिकेत ॥ ८ ॥
विपुल बीज अंकुरित हो अंकुर सकल समेत।
हैं हरि पता बता रहे हरे भरे सब खेत ॥ ६ ॥
जोत नहीं तम में मिली लाखों बार टटोल।
भेद भला कैसे खुले सकें न आँखें खोल ॥१०॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

आँसू

चौपदे

बाढ़ में जो वहे न बढ़ बोले।
किस लिये तो बहुत बढ़े आँसू॥
जो कलेजा न काढ़ पाया तो।
किस लिए आँख से कढ़े आँसू॥ १॥

अड़ अगर बार बार अड़ती है।
तो रहे क्यों नहीं अड़े आँसू॥
जो निकाले न जी कसर निकली।
आँख से क्यों निकल पड़े आँसू॥ २॥

फेर में डालते हमें जो थे।
तो फिराये न क्यों फिरे आँसू॥
जो किसी आँख स गये गिर तो।
किस लिये आँख से गिरे आँसू॥ ३॥

जान जिन में है जान वाले वे।
हैं गिराते न जी गये आँसू॥
प्यास थी आबरू बचाने की।
फिर अजब क्या कि पी गये आँसू॥ ४॥

है उन्हें देख आग लग जाती।
कब जलाते नहीं रहे आँसू॥
टूटता बेतरह कलेजा है।
फूटती आँख है बहे आँसू॥ ५॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जो सकें सींच सींच तो देवें।
किस लिये प्यार जड़ खनें आँसू॥
जी जलों का न जी जलायें वे।
हैं अगर जल तो जल बनें आँसू॥ ६॥

हैं छलकते उमड़ उमड़ आते।
देख नीचा नहीं डरे आँसू॥
आँख कैसे नहीं तरह देती।
बेतरह आज हैं भरे आँसू॥ ७॥

चाल वाले न कब चले चालें।
चोचलों साथ चल पड़े आँसू॥
मनचलापन दिखा दिखा अपना।
मनचलों से मचल पड़े आँसू॥ ८॥

खर खलों के मिले जलन से जल।
आग जैसे न क्यों बलें आँसू॥
जो कि हैं जी जला रहे उनको।
क्यों जलाते नहीं जले आँसू॥ ६॥

जो उन्हें था बखेरना काँटा।
किस लिये तो बिखर पड़े आँसू॥
क्यों किसी आँख से निकल कर के।
क्यों किसी आँख में गड़े आँसू॥ १०॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पूर्व गौरव

लावनी

बल में विभूति में हमें कौन था पाता।
था कभी हमारा यश वसुधातल गाता॥
फरहरा हमारा था नभ में फहराया।
सिर पर सुरपुर ने था प्रसून बरसाया॥
था रत्न हमें देता समुद्र लहराया।
था भूतल से कमनीय फूल फल पाया॥
हम-सा त्रिलोक में सुखित कौन दिखलाता।
था कभी हमारा यश वसुधातल गाता॥ १॥

था एक एक पत्ता पुरा हितकारी।
रजकण से हम को मिली सफलता न्यारी॥
कंटकमय महि हो गई कुसुम की क्यारी।
बन गई हमारे लिये सुखनि खनि सारी॥
था भाग्य हमारा विधि-सा भाग्य विधाता।
था कभी हमारा यश वसुधातल गाता॥ २॥

छूते ही मिट्टी थी सोना सोना बन जाती।
कर परस रसायन रही धूलि कर पाती॥
पाहन में पारस की सी कला दिखाती।
तिनके बनते नाना निधियों की थाती॥
गुण गौरव था गौरवमय महि का पाता।
था कभी हमारा यश वसुधातल गाता॥ ३॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मरुधरा मध्य थे मन्दाकिनी बहाते।
थे दग्ध बनों के वर वारिद बन जाते॥
रसहीन थलों में थे रस-स्रोत लसाते।
ऊसर समूह में थे रसाल उपजाते॥
हम सा कमाल का पुतला कौन कहाता।
था सुयश हमारा सब वसुधातल गाता॥ ४॥

हम थे अप्रीति के काल प्रीति के प्याले।
हम थे अनीति-अरि नीति-लता के थाले॥
हम थे सुरीति के मेरु भीति उर भाले।
हम थे प्रतीति-प्रिय प्रेम-गीति मतवाले॥
था सदा हमारा मानस मधु बरसाता।
था सुयश हमारा सब वसुधातल गाता॥ ५॥

हम धीर बीर गंभीर बताये जाते।
अभिमत फल हम से सब फल कामुक पाते॥
सुख शान्ति सुख धारा थे हमीं बहाते।
जगती में थे नवजीवन ज्योति जगाते॥
नित रहा हमारा मानवता से नाता।
था सुयश हमारा सब वसुधातल गाता॥ ६॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

नीति-गुच्छ

दोहा

अपने अपने काम से है सब ही को काम।
मन में रमता क्यों नहीं मेरा रमता राम ॥ १ ॥
क्यों माने मन दान को महि में महिमावान।
बलि जब बंधन में पड़ा बिधि पर हो बलिदान ॥ २ ॥
बातें करें अकास की बहक बहक हों मौन।
जो वे बनते संत हैं तो असंत हैं कौन ॥ ३ ॥
अपने पग पर हो खड़े तजें पराई पौर।
रख बल अपनी बाँह का बनें सबल सिर मौर ॥ ४ ॥
कौन पास उसका करे जिसे नहीं निज पास।
पूज पराये पाँव को किसकी पूजी आस ॥ ५ ॥
प्यास कभी जाती नहीं पिये बिना रस ऊख।
भूख भला किसकी भगी हरे देख कर रूख ॥ ६ ॥
कोई भला न कर सका खल को बहुत खखेड़।
सुन्दर फल देते नहीं बुरे फलों के पेड़ ॥ ७ ॥
क्या खुल पाये जब गये नीलकंठ ! पर टूट।
क्या छूटे जब नहिं सके कुटिल काक से छूट ॥ ८ ॥
चाकर हैं सब चित्त के क्या चकोर क्या कोक।
खिले कमल अवलोक रवि कुमुद मयंक विलोक ॥ ९ ॥
आनन्दित कर है वही कुमुद हृदय आनन्द।
होवे विविध कलंक से क्यों न कलंकित चन्द ॥१०॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अपने अपने भाव हैं अपने अपने साथ।
भूले आक-प्रसून पर भोले भोला-नाथ ॥११॥
केसर रंग प्रसंग से फड़के भरे उमंग।
केसरिया बाना पहन वीरकेसरी अंग ॥१२॥
अल्पकाल से कलित है चिर संगति का काल।
केसर-क्यारी कब बना केसर विलसित भाल ॥१३॥
कहाँ सुबास बसी रही बनी कुबास कुठौर।
कामुकता कस में रहे कल केसर की खौर ॥१४॥
काले रंग में जो रंगे होते कुटिल कठोर।
मूँगे सा होता नहीं तो सूगे का ठोर ॥१५॥
विकसित करते नहिं किसे विकच बदन बुध वृन्द।
हिले मिले अलि से रहे कब न खिले अरबिन्द ॥१६॥
भूल भूल है, क्यों कहें उसे बुद्धि अनुकूल।
फूले बिना सफल बने कैसे गूलर फूल ॥१७॥
विधि सा सुत रवि सा सुहृद पा हरि सा आधार।
सार हीन होता रहा सरसिज पड़े तुसार ॥१८॥
काल बना क्यों कमल का क्यों कर सका न प्यार।
तू तुसार यह समझ ले है असार संसार ॥१९॥
कैसे वारिज पुंज की दहे नहीं वह देह।
हिमकर-अहितू से करे हिम समूह क्यों नेह ॥२०॥
भले बुरे की ही रही भले बुरे से आस।
काँटे हैं तन वेधते देते सुमन सुबास ॥२१॥

—:—

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पादप–पंक्ति

जो न भले हैं, तो भले कैसे दें फल फूल।
काँटे बोवें क्यों नहीं काँटे भरे बबूल ॥ १ ॥
है छाया छाया नहीं, हैं फल चढ़े पहाड़।
ऊँचे बन पाये नहीं सिर ऊँचा कर ताड़ ॥ २ ॥
रसिक जनों के हैं सधे सरस हृदय से काम।
रस वाले फल दे सकें रसवाले तरु आम ॥ ३ ॥
काँटे विध विध के न क्यों वेध वेध दें पैर।
बैर नाम है वैर का कैसे करे न वैर ॥ ४ ॥
पत खोकर होती नहीं सुखद सुखों की प्यास।
क्यों फूले, दल रहित हो फूले अगर पलास ॥ ५ ॥
अधिक मधुर जो कर सका तेरे फल को पाल।
क्या रसालता तो रही तेरी विटप रसाल ॥ ६ ॥
रह समीप सुख से हिले बदरी फल दिन रात।
क्यों विदलित होता रहे कदलीदल का गात ॥ ७ ॥
विपुल थलों को सछवि कर बन बहु मंगल धाम।
बड़े हुए हैं कदलि दल बड़े बड़े कर काम ॥ ८ ॥
कटुता में पटुता मिली है हितपटु कटु नीम।
दल हैं नर-दुख दलन रत फल हैं फलद असीम ॥ ९ ॥
ऊँचा होकर भी सका तू चल भली न चाल।
चंचल दल तेरे रहें क्यों चलदल सब काल ॥१०॥
कर देते हैं जी हरा बार बार कर छेड़।
पा कर के पत्ते हरे ए पाकर के पेड़ ॥११॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बहु-विनोद धन से किसे नहिं करता धनवंत।
हरसिंगार की सुरभि से हो सौरभित दिगंत ॥१२॥
पुलकित करती है विपुल बन बन पुलक निवास।
हरसिंगार की दूर से आती सरस सुवास ॥१३॥
हो माई का लाल तो एक लाल है लाल।
कब सेमल लाली रही हो फूलों से लाल ॥१४॥
सेमल हो ऊँचे तदपि हो भूले, कर भूल।
जिनके फल हैं नहिं भले क्या वे सुन्दर फूल ॥१५॥
हैं सुन्दरता सफलता मधुमयता अवलम्ब।
ए कदम्ब-तरु के खिले पीले कुसुम कदम्ब ॥१६॥

कुसुम-क्यारी

भली रही होती अगर भौंरे ही से भूल।
बेले पर फूले नहीं क्यों बेले के फूल ॥ १ ॥
क्यों फूली है तू बहुत भली नहीं यह बान।
जूही तू ही सोच क्या तू ही है छबिमान ॥ २ ॥
है सुबास सुकुमारता सुन्दरता में लीन।
वेलि चमेली की बने कैसे अलबेली न ॥ ३ ॥
हरे हरे दल में लसे सके नहीं पल भूल।
गेंदे के फूले हुए पीले पीले फूल ॥ ४ ॥
वह तन पाती है नहीं जग में ज्योति बितान।
होवेगी गुलचाँदनी क्यों चाँदनी समान ॥ ५ ॥
दल दमके चमके सुमन बन तारक उपमान।
तो होगी गुलचाँदनी क्या चाँदनी समान ॥ ६ ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हैं कितने सुन्दर सरस कितने दृग अनुकूल।
रँगे गुलाबी रंग में ए गुलाब के फूल ॥ ७ ॥
किसे नहीं हैं मोहते मिले मनोहर आब।
रंग भरे निखरे खरे सुथरे सरस गुलाब ॥ ८ ॥
ललित ललाम कपोल से बिलसित मंजुल धूल।
हैं अनमोल गुलाब के गोल गोल ए फूल ॥ ९ ॥
मिले बुरों में कब भले यह कहना है भूल।
काँटों में रहते नहीं क्या गुलाब के फूल ॥१०॥

पं० रामचरित उपाध्याय

वसन्त-विडम्बना

(१)

रे वसन्त ! क्या खबर न अपनी,
तू कितने दिन का मेहमान ?
निरा फूल है, फूल न इतना,
पाकर यहाँ अधिक सम्मान ॥

भोग्य-भूमि है यहाँ अनेकों,
आते जाते रहते हैं।
तुझको भी जाना ही होगा,
इसका प्रतिपल रखना ध्यान ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

(२)

परदेशी पक्षी-सा आकर,
क्यों तू बन बैठा ऋतुराज ?
समझ-बूझ तो मन में, तेरी—
क्या दुर्गति होती है आज ?

कालिख कहीं लगाता कोई,
कोई गाली देता है।
धूल उड़ाता है कोई, पर—
तुझको तनिक न लगती लाज ॥

(३)

एकत्रित कर विविध वस्तुएँ,
होली जलती तेरे नाम।
छीछालेदर अपनी इतनी,
सहना है तेरा ही काम ॥

घृणा-दृष्टि से तुझे देख कर,
खंजन होते जाते दूर।
अपमानित मत हो झटपट तू,
मधु ! सिधार जा अपने धाम ॥

(४)

अपनी अवधि निकट आती लख,
क्यों क्या तेरा हुआ हवाल ?
तेरे कुमकुम के चलने से,
भारत-भूमि हुई है लाल ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पर इससे क्या होगा ? होगा—
होना है जो काम वही।
फीका रंग पड़ेगा तेरा,
यद्यपि तूने किया कमाल ॥

(५)

हिमोपलों का यद्यपि संगटन,
रहा नहीं पहले सा आज।
फिर भी तेरी अनधिकार की,
चेष्टा होवेगी बे काज ॥

ग्रीष्म-ज्वाला जब भभकेगी,
तब तू रह न सकेगा मूढ़ !
तेरा समय बचा है कितना,
इसका किसे नहीं अन्दाज़ ?

(६)

वृथा कोंइयों के कोशों में,
क्यों भ्रमरों को रक्खा रोक ?
नहीं झिलमिली के परदे से,
रुक सकता है रवि-आलोक ॥

ग्रीष्मातप सह तू न सकेगा,
रह न जायँगे नलिनी कोश।
अपने क्रूर कर्म पर तुझको,
बना रहेगा निरवधि शोक ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

(७)

कुसुमित-कुंज-व्याज से क्यों तू—
दिखा रहा है आँखें लाल?
डर कर मधुकर कहाँ जायँगे?
व्यर्थ बना मत वदन कराल॥

कृपा कोप दोनों ही तेरे,
तेरे रक्षक नहीं वसन्त!
प्रकृति-प्रवाह बहा देता है,
चूर चूर कर शैल विशाल॥

(८)

वियोगियों पर बल दिखला कर,
बना हुआ है क्यों भू-भार?
क्या दीनों के आहानल से,
जल कर तू न बनेगा क्षार?

कूक कूक कोयल कहती है,
रे ऋतुपति! तेरा है अन्त।
गई अँधेरी रात चाँदनी—
आई, मन में देख विचार॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पं० गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही'

सत्य

(१)

सत्य सृष्टि का सार सत्य निर्बल का बल है;
सत्य सत्य है सत्य नित्य है अचल अटल है।
जीवन सर में सरस मित्रवर यही कमल है;
मोद मधुर मकरन्द सुयश सौरभ निर्मल है॥
मन मलिन्द मुनि वृन्द के मचल मचल इस पर गये।
प्राण गये तो इसी पर न्योछावर होकर गये॥

(२)

अटल सत्य का प्रेम भरे जिस नर के मन में;
पाये जो आनन्द आत्म बल के दर्शन में।
पशुबल समझे तुच्छ खड्ग भूषण गर्दन में,
सनके भी जो नहीं गोलियों की सनसन में॥
जीवन में बस प्रेम ही जिसका प्राणाधार हो।
सत्य गले का हार हो इतना उस पर प्यार हो॥

(३)

सहकर सिर पर भार मौन ही रहना होगा;
आये दिन की कड़ी मुसीबत सहना होगा।
रङ्गमहल सी जेल आहनी गहना होगा;
किन्तु न मुख से कभी हन्त हा! कहना होगा॥
डरना होगा ईश से और दुखी की हाय से।
भिड़ना होगा ठोंक कर खम अनीति अन्याय से॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तू धन मैं लोभी, तू सरबस मैं अति तुच्छ सखा तेरा !
सब प्रकार से परम सनेही ! मैं तेरा हूँ, तू मेरा !

——

परमार्थ-चिन्ता

है यदि पुत्र स्वर्गप्रद तो फिर, धर्म निरर्थक ही है,
जिनके बहुत पुत्र हैं उनके जीवन सार्थक ही हैं।
बहु सुत जननी खरी, कूकरी, अधम शूकरी नारी;
नखी, नागिनी आदि जीव क्या, सभी स्वर्ग अधिकारी ? १॥
क्षुद्र जीव समुदाय सभी यदि पुत्रवान होने से—
सहज ऊर्ध्वगति पा सकते हैं विषय बीज बोने से—
तो फिर वृथा कर्म-साधन सब, आश्रम धर्म वृथा है;
स्वर्ग लाभ करने की क्या ही, सच्ची सहज प्रथा है ! २॥
कौन नर्क जावेगा ? हैं यदि सभी स्वर्ग अधिकारी,
ऐसा क्षुद्र तर्क करते क्यों ? होकर ब्रह्म-विचारी।
स्वर्गवास, यश, पौरुषादि, यदि पुत्र लाभ से पाते—
कर लालन पालन ही उसका, कौन यमालय जाते ? ३॥
ऐसे नश्वर गृह-सुख से क्या ज्ञानी मोहित होगा ?
जिसमें जरा मरण का जिसने सदा दुःख ही भोगा।
हितकर समझ अंक में जिनके गृही सदा सोते हैं,
वे ही सुत, वनितादि मूढ़ के, प्रति-बन्धक होते हैं ॥४॥
समझ चुका जो भेद जगत का 'है यह मिथ्या माया',
उसके आगे सभी धूल है कनक, कामिनी, काया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

यह यौवन गिरि-नदी-वेग सम, उसको लख पड़ता है,
क्षणिक शरीर जान यम से भी, बाहु ठोंक लड़ता है ॥५॥
जग-असारता, आयु-चपलता, नश्वरता भोगों की,
देख देख भी नहीं चिकित्सा की जिसने रोगों की।
उस अन्धे को जन्म मरण की बदी भोगमानी है,
जीवन उसका पाप ताप की बनी राजधानी है ॥६॥
सूर्योदय के साथ अस्त यदि उसका नियमित होगा.
धीरे धीरे जीवन भी तब क्या न अस्तमित होगा ?
किन्तु, अहो ! आश्चर्य महा है, जीव मूढ़ है कैसा ?
इस असार संसार-मोह में पगा हुआ जो ऐसा ॥७॥
जन्म-जरा को देख नहीं कुछ मरने का भय खाता,
मोहमयी मदिरा निशिवासर है पीता ही जाता।
ऐसे ज्ञानशून्य पथ का क्या शुक अनुसरण करेगा ?
इन कामान्ध विमूढ़ जनों का क्या अनुकरण करेगा ॥८॥
जग प्रलोभ में पड़कर करता जो असार कर्मों को।
विषयों में फँसता है तजकर श्रेयस्कर धर्मों को।
श्रीहरि शरण भूल होता जो सुत वनिता अनुरागी ;
वह बहु दुःख भोगकर होगा क्यों न अधोगति भागी ? ९॥
एक जन्म के ही कर्मों से, बँधी मोह ममता है,
सौ जन्मों तक नहीं ठिकाना चौरासी भ्रमता है।
बार बार भ्रम में पड़कर यह जीव कष्ट पाता है,
जन्म जन्म को कर्म-पाश में कस कर बँध जाता है ॥१०॥
आत्मबोध के हो जाने से अघ भी लय होते हैं।
शत जन्मों के किए कर्म सब क्षण में क्षय होते हैं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हृदय-ग्रन्थि खुल जाने पर ही संशय सकल हटेंगे,
अनायास ही मुक्ति मिलेगी जग जंजाल कटेंगे ॥११॥

श्री मैथिलीशरण गुप्त

अभिमन्यु-दाह

(१)

इस ओर देकर पाण्डवों को शान्तिदायी सान्त्वना,
सौभद्र-शव संस्कार की श्रीकृष्ण ने की योजना।
कृष्णादि से वेष्टित उसे भगवान ने देखा तथा,
मुरझी लताओं के निकट सूखा प्रसून पड़ा यथा॥

(२)

कृष्णा सुभद्रा आदि को अवलोक कर रोते हुए,
हरि के हृदय में भी वहाँ कुछ कुछ करुणरस कण चुए,
आते हुए अवलोक उनको देह भान बिसार के,
बोली सुभद्रा मृतकवत्सा गो समान पुकार के॥

(३)

भैया, कहो मेरे दृगों का आज तारा है कहाँ?
मुझ दुःखिनी हतभागिनी का सुःख सारा है कहाँ?
सम्पूर्ण गुण-सम्पन्न वह अनुचर तुम्हारा है कहाँ?
हा! पाण्डुवंश-प्रदीप अब अभिमन्यु प्यारा है कहाँ?

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

(४)

"भैया, तुम्हें क्या विश्व में मुझको दिखाना था यही ?
हा ! जल गया यह हतहृदय, दृग-ज्योति सब जाती रही !
तव काल-गति के मार्ग में अभिमन्यु ही था क्या अहो !
करुणानिधे ! करुणा तुम्हारी हाय ! यह कैसी कहो" ?

(५)

रोने लगी यों कह सुभद्रा, दुःख-वेग न सह सकी,
पर रुद्धकण्ठा द्रौपदी कुछ भी न उससे कह सकी।
बस अश्रुपूर्ण विलोचनों से देखकर हरि को वहाँ,
निर्जीव सी वह रह गई बैठी जहाँ की ही तहाँ॥

(६)

मानो गिरा भी कह सकी पीड़ा न उसकी हार के,
अतएव वह चुप रह गई हरि के समक्ष निहार के।
पर अश्रुजल-अवरुद्ध उसकी दृष्टि ने मानों कहा—
"अब और क्या इस दुःखिनी को देखना बाकी रहा ?"

(७)

यों जानकर सबको दुखी, लख उत्तरा-उत्ताप को,
भूले रहे भगवान भी कुछ देर अपने आप को।
फिर रोक करुणा-वेग सबको शीघ्र समझाने लगे,
उस शोक-सागर से उन्हें तट ओर ले जाने लगे॥

(८)

"धीरज धरो कृष्णे, अहो ! भद्रे सुभद्रे ! शान्त हो,
है गति यही तनुधारियों की, शोक से मत भ्रान्त हो।
यह कौन कह सकता कि अब अभिमन्यु जीवित है नहीं ?
जग में सदा को कीर्ति करना है भला मरना कहीं ?

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

(९)

जब तक प्रकाश समर्थ होगा अन्धकार विनाश में,
जब तक उदय होते रहेंगे सूर्य शशि आकाश में।
अभिमन्यु का विश्रुत रहेगा नाम तब तक सब कहीं,
नश्वर जगत में जन्म लेकर वीर मरते ही नहीं॥

(१०)

"आजन्म तप करके कठिन मुनि भी न जा सकते जहाँ,
संसार के बन्धन कभी कोई न आ सकते जहाँ,
अक्षय्य सब सुख हैं जहाँ दुख एक भी होता नहीं,
सच मानकर मेरे वचन अभिमन्यु को जानो वहीं॥

(११)

"वह धीर नश्वर देह तजकर आप तो है ही जिया,
पर, सत्य समझो, है तुम्हें भी अमर उसने कर दिया।
ऐसे समर्थ सपूत का तुम शोक करती हो अहो!
उसकी सहज की मृत्यु में गौरव कहाँ था यह कहो?"

(१२)

कहकर वचन भगवान ने यों ज्ञान जब उनको दिया,
कुछ शान्त जब हरि-सान्त्वना से हो गया उनका हिया,
तब युग दृगों से दुःखमय अविरल सलिल धारा बहा,
पाकर तनिक अवलम्ब सा यों याज्ञसेनी ने कहा—

(१३)

"धिक्कार है हे तात! ऐसी अमरता पर लोक में,
जीना किसे स्वीकार है आजन्म रहकर शोक में,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पूरे हुए हैं क्या हमारे पूर्व पाप नहीं अभी ?
हा ! वह हमारा पुत्र प्यारा फिर मिलेगा क्या कभी ?

(१४)

"अभिमन्यु को मृत देखकर भी हाय मैं जीती रही,
हा ! क्यों न मुझ हतभागिनी के अर्थ फट जाती मही,
दुःख भोगने ही के लिए क्या जन्म है मेरा हुआ,?
हा कब रहा जीवन न मेरा शोक से घेरा हुआ ?

(१५)

"मेरे हृदय के हर्ष हा ! अभिमन्यु, अब तू है कहाँ ?
दृग खोलकर बेटा, तनिक तो देख हम सबको यहाँ ?
मामा खड़े हैं पास तेरे तू मही पर है पड़ा ?
निज गुरुजनों के मान का तो ध्यान था तुझको बड़ा ॥

(१६)

"व्याकुल तनिक भी देखकर तू धैर्य देता था मुझे ?
पर आज मेरे पुत्र प्यारे, हो गया है क्या तुझे ?
धात्री सुभद्रा को समझ कर माँ मुझे था मानता,
पर आज तू ऐसा हुआ मानो न था पहचानता ॥

(१७)

" हा ! पाँच ग्रामों की बुरी यह सन्धि जब होने लगी,
सुनकर तथा उस बात को जब मैं बहुत रोने लगी।
क्या याद है ? था पाण्डवों के सामने तूने कहा—
'स्वीकृत नहीं यह सन्धि मुझको, माँ ! न तू आँसू बहा'

(१८)

"रहते हुए भी शस्त्रधारी पाण्डवों के साथ में,
हा ! तू अकेला हत हुआ पड़ पापियों के हाथ में, ?

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कोई न कुछ भी कर सका ऐसा अनर्थ हुआ किया,
धिक् पाण्डवों की शूरता धिक् शस्त्र-धारण की क्रिया" ॥

(१६)

कहती हुई यों द्रौपदी का कण्ठ गद्गद् हो गया,
विष-वेग के सम शोक से चैतन्य उसका खो गया।
हरि ने सजग कर तब उसे व्यजनादि के उपचार से,
दी सान्त्वना समयोपयोगी ज्ञान के विस्तार से ॥

(२०)

"अभिमन्यु के दर्शन विना तुमको न रोना चाहिए,
उसकी परम-पद-प्राप्ति सुनकर शान्त होना चाहिए।
ले जन्म क्षणभंगुर जगत् में कौन मरता है नहीं?
पर है उचित मरना जहाँ तक वीर मरते हैं वहीं ॥

(२१)

"अभिमन्यु के घातक सभी अति शीघ्र मारे जायँगे;
तुम स्वस्थ हो, इस पाप का वे दण्ड पूरा पायँगे।
करते अभी तक पार्थ थे जो युद्ध करुणाधीन हो,
बन जायँगे अब रुद्र रण में रोष में अति लीन हो ॥

(२२)

"होगा जयद्रथ कल निहत, प्रण कर चुके अर्जुन अभी,
धीरज धरो अतएव मन को शान्त कर के तुम सभी!
दो धैर्य मेरी ओर से, सब उत्तरा के चित्त को,
सुत-रूप में वह पायगी खोये हुए निज वित्त को" ॥

(२३)

श्रीकृष्ण ने इस भाँति सब को लीन करके ज्ञान में,
प्रस्तुत कराई शीघ्र ही चन्दन चिता सुस्थान में।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अभिमन्यु का मृत देह उस पर शान्ति से रक्खा गया,
ज्यों क्रूरता की गोद में कारुण्य का भाजन नया ॥

(२४)

होकर ज्वलित तत्क्षण चिता की ज्वाल ने नभ को छुआ,
पर उस विपत्ति-वियोग-विधुरा उत्तरा का क्या हुआ ?
उस दग्धहृदया को मरण भी हो गया दुर्लभ बड़ा,
वह गर्भिणी थी, इसलिए निज तनु उसे रखना पड़ा ॥

(२५)

अभिमन्यु का तनु जल गया तत्काल ज्वाला जाल से,
पर कीर्ति नष्ट न हो सकी उस वीरवर की काल से।
अच्छा-बुरा सब नाम ही रहता सदा है लोक में,
वह धन्य है जिसके लिये हों लीन सज्जन शोक में ॥

पंडित रूपनारायण पांडेय

दलित कुसुम

(१)

अहह ! अधम आँधी, आगई तू कहाँ से ?
प्रलय घन घटा-सी छा गई तू कहाँ से ?
पर-दुख-सुख तू ने हा ! न देखा, न भाला,
कुसुम अधखिला ही हाय, यों तोड़ डाला !

(२)

तड़प-तड़प माली अश्रु-धारा बहाता,
मलिन मलिनिया का दुःख देखा न जाता।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

निठुर! फल मिला क्या व्यर्थ पीड़ा दिए से,
इस नव लतिका की गोद सूनी किए से?

(३)

यह कुसुम अभी तो डालियों में धरा था,
अगणित अभिलाषा और आशा-भरा था।
दलित कर इसे तू काल, क्या पा गया रे?
कण-भर तुझ में क्या हा, नहीं है दया रे?

(४)

सहृदय जन के जो कंठ का हार होता,
मुदित मधुकरी का जीवनाधार होता।
वह कुसुम रँगीला धूल में जा पड़ा है;
नियति, नियम तेरा भी बड़ा ही कड़ा है!

वसंत का आगमन

(चतुर्दश पदी)

छोड़ पुराने पत्र, नई पोशाक से—
फूल-फलों की लिए डालियाँ हाथ में,
सफल जानकर जन्म, अदब से सब झुके,
अगवानी के लिये वृक्ष तैयार हैं।
पल्लव वंदनवार तने हैं सब तरफ़,
फूली सरसों, फर्श बिछाया खेत में।
हवा हर तरफ़ राह साफ़ करती फिरे;
वंदीजन कोकिल करे जय-घोषणा।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गुन-गुन-गुन गुण-गान भ्रमरगण कर रहे।
महक रही मंजरी, अतर सोई मले—
ललित लता मंगलामुखी-सी नाचती।
शीत भीत हो भगा, देख जिसको, सभी
लोग काँपते, प्रकृति हुई उन्मुत्त-सी।
नृप वसंत का हुआ धरा पर आगमन ॥

सर्प और खल

(चतुर्दश पदी)

सर्प और खल, इन दोनों में किसको आप अधिक जानें ?
मेरा मत तो यही, सर्प से खल को आप बड़ा मानें।
चोट चपेट पड़े वह डँसता, यह योंही डँस लेता है;
निकट गए वह चोट करे, यह दूरी से दुख देता है।
उसके काटे का उपाय है, इसके काटे मंत्र नहीं;
उसके मुख में विष है, इसके विष-ही-विष है सभी कहीं।
किसी-किसी अहि के मणि होती, खल के भी विद्या वैसे;
मगर भयंकर दोनों ही हैं; इनसे बचो, बने जैसे।
वह बाहर से कुटिल, मलिन, यह वैसा ही है भीतर से;
वह आश्रित मलयाचल का, यह आश्रय लहे धनी नर से।
गुणी जनों के मंत्रौषधि से चटपट उसका विष उतरे,
अपने मंत्रों से गुणियों का सर्वनाश यह किन्तु करे।
दोनों के प्रतिकार तीन ही, विद्वानों ने बतलाए—
मुख-मर्दन, या दाँत-तोड़ना, या हट जाना, जब आए॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

श्री जयशंकर 'प्रसाद'

असंतोष

हरित वन कुसुमित हैं द्रुम-वृन्द;
बरसता है मलयज मकरंद।
स्नेहमय सुधा दीप है चन्द;
खेलता शिशु होकर आनन्द।
क्षुद्र गृह किंतु हुआ सुख मूल; उसी में मानव जाता भूल।
नील नभ में शोभित विस्तार।
प्रकृति है सुन्दर, परम उदार।
नर हृदय, परिमित, पूरित स्वार्थ;
बात जँचती कुछ नहीं यथार्थ।
जहाँ सुख मिला न उससे तृप्ति, स्वप्न सी आशा मिली सुषुप्ति
प्रणय की महिमा का मधुमोद;
नवल सुषमा का सरल विनोद,
विश्व गरिमा का जो था सार,
हुआ वह लघिमा का व्यापार।
तुम्हारा मुक्तामय उपहार, हो रहा अश्रुकणों का हार।
भरा जी तुमको पाकर भी न;
हो गया छिछले जल का मीन।
विश्वंभर का विश्वास अपार,
सिन्धु-सा तैर गये उस पार।
न हो जब मुझको ही संतोष, तुम्हारा इसमें क्या है दोष?

———

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तुम !

जीवन जगत के, विकास विश्व वेद के हो,
परम प्रकाश हो, स्वयं ही पूर्ण काम हो।
विधि के विरोध हो, निषेध की व्यवस्था तुम,
खेद भय रहित, अभेद, अभिराम हो।
कारण तुम्हीं थे, अब कर्म हो रहे हो तुम्हीं,
धर्म कृषि मर्म के नवीन घनश्याम हो।
रमणीय आप महामोदमय धाम, तो भी,
रोम रोम रम रहे, कैसे तुम राम हो?
बुद्धि के, विवेक के, या ज्ञान, अनुमान के भी,
आये जो पतंग तुम्हें देखने चले गये;
बलिहारी माधुरी अनंत कमनीयता की,
रूप वाले लोटने को पैरों के तले गये।
शंका लगी होने किसी को, तो कोई सपने सा,
जपने लगा है आप भूल में जले गये;
छलने के लिये तो सवाँग बहुरूपिए के,
तुमने लिए अनेक तुम ही छले गये।
सुमन समूहों में सुहास करता है कौन,
मुकुलों में कौन मकरंद सा अनूप है;
मृदु मलयानिल-सा माधुरी उषा में कौन,
स्पर्श करता है, हिम काल में ज्यों धूप है।
मान है तुम्हारा, अभिमान है हमारा, यह
"नहीं नहीं" करना भी "हाँ" का प्रतिरूप है;

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

घूँघट की ओट में छिपा है भला कैसे कभी,
फूटकर निखर बिखरता जो रूप है।
होकर अतृप्त तुम्हें देखने को नित्य नया
रूप दिये देता हूँ पुराना छोड़ने के लिये;
तुम्हें भी न होता कभी मेरी जान, ज्ञान कुछ
बनते ही जाते हो रहस्य जोड़ने के लिये।
कंज कामना की आँखें आलस से बंद सोईं
चंद उपहारों से भी मुँह मोड़ने के लिये;
बंधन में बँधता प्रतिज्ञा की प्रतीति किए,
तुम हँस देते, बस उसे तोड़ने के लिये।
दीन दुखियों को देख आतुर अधीर अति
करुणा के साथ उनके भी कभी रोते चलो;
थके श्रमी जीवों के पसीनेभरे सीने लग
जीने को सफल करने के लिये सोते चलो।
भोले भाले बालकों के इस विश्व खेल में भी
लीला ही से हार और श्रम सब खोते चलो;
सुखी कर विश्व, भरे-स्मित सुखमा से मुख
सेवा सब की हो, तो प्रसन्न तुम होते चलो।

———

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पं० बदरीनाथ भट्ट

प्रातःकालीन तारों के प्रति

चिढ़ाते हो क्यों हमको यार,
धीरे-धीरे टूट रहा है सभी तुम्हारा तार।

हँस-हँस कर हमको निहारते,
आँखें मटकाते न हारते।
मिट जाओगे पलक मारते,
रहे मिनट दो चार॥

निज को सुखी समझते हो तुम,
सब से तभी उलझते हो तुम।
अपनी बान न तजते हो,
करो न आत्म-सुधार॥

आसमान पर खड़े हुए हो,
सब से ऊँचे चढ़े हुए हो!
सब बातों में बढ़े हुए—
हुए न तनिक उदार॥

जिस प्रभु ने है तुम्हें बनाया,
उसने ही सब जग प्रगटाया।
हमको भी उसने जन्माया—
तुम कैसे सरदार?

पीछे से पछताओगे तुम,
रवि की ठोकर खाओगे तुम,
यम के घर उड़ जाओगे तुम—

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ले कर्मों का भार।
चिढ़ाते हो क्यों हमको यार॥

तुलसीदास और रामायण

सुलभ कर गये ब्रह्म का ज्ञान।
तरने को भव सिन्धु बनाया राम नाम जलयान॥ १॥
दृश्य-अदृश्य, अलौकिक-लौकिक मिले एक ही ठाँव।
भक्ति, ज्ञान, वैराग्य आदि आ बसे एक ही गाँव॥ २॥
स्वार्थ और परमार्थ मिलाया, हुआ सार निस्सार।
अनुभव की कुंजी से खोला अगम मुक्ति का द्वार॥ ३॥
मोह शिखर पर फँसे जनों को सीढ़ी है तय्यार।
गिरने का है डर न ज़रा भी राम नाम आधार॥ ४॥
रोम रोम में रमा तुम्हारे राम रूप संसार।
भक्ति-प्रेम-अवतार धन्य है तुमको बारम्बार॥ ५॥

स्वामी जी

इसे ही कहते हैं वैराग्य?
तो विरागता के सचमुच ही फूटे समझें भाग्य?
निर्मल बसन बिगाड़ा उस पर धरा सुनहला रंग,
लज्जित हुआ जाल माया का देख जटा का ढंग।
क्रोध-कमण्डलु, मोह माल, कर लिया द्रोह का दंड,
लोभ लँगोट बाँध फैलाते हो प्रचंड पाखंड।
तन में भस्म रमाई, कर के भस्म सभी घरबार,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अब चिमटा ले निकल पड़े हो करने जग उद्धार।
घर घर टुकड़े माँग रहे हो तप के बल हो धन्य!
दर-दर नित धक्के खाते हो अहो कष्ट तप-जन्य!
चोरी, जुवा, लफंगेपन में हो तुम गुरु घंटाल,
गाँजा, भंग, अफीम, चरस रस मदिरा के हो काल।
संसृति में खुद फँसे हुए हो हमें दिखाते मुक्ति!
धन्य-धन्य आध्यात्म शक्ति को, धन्य मुक्ति की युक्ति!
बहुत हो चुकी गुरुडम-लीला अब इससे मुँह मोड़,
बाबा जी, अब बन मनुष्य तू बनमानुसपन छोड़।

गोपाल शरण सिंह

प्रार्थना

(१)

दीन बलहीन हैं सदैव ही सताये जाते,
क्या कहें जगत के निठुर व्यवहार को।
तो भी चुपचाप वे न जानें किस प्रेमवश,
उर से लगाये रहते हैं दुख-भार को।
रहने न पाते वे कदापि सुख-शान्ति से हैं,
कहने न पाते निज मन के विचार को।
करुणावतार! कब रोकिएगा पापाचार,
अविचार, अत्याचार और अनाचार को॥

(२)

मानस से माया की मरीचिका मिटा के महा,
मोह-मद-मत्सर का माथा फोड़ दीजिए।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

नीति से अनीति का कराइए घमंड चूर,
प्रीति का सभी में नया नाता जोड़ दीजिए।
करिए अनाथ को सनाथ शीघ्र दीनानाथ,
दीन दुखियों का दुख-जाल तोड़ दीजिए।
कीजिए दया तुरंत लीजिए उबार उन्हें,
अथवा दयानिधि कहाना छोड़ दीजिए॥

गोपाल

कब से तुम्हारी राह दिन रात देखता हूँ,
दयाघन! दया कर दया दिखलाओ तुम।
यह तो बताओ तुम छिपे किस लोक में हो,
आओ शीघ्र मुझे मत और तरसाओ तुम।
राधा के सहित करो मेरे उर में निवास,
और सब मेरी भव-बाधा को मिटाओ तुम।
जाऊँ मैं कहाँ गोपाल शरण तुम्हारी छोड़,
नाम के ही नाते अब मुझे अपनाओ तुम॥

गुलाबरत्न वाजपेयी

तपस्वी

(१)

इस सुन्दर तप-कानन में,
हे ऋषि, हे वल्कलधारी!

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

यह फैल रही है कैसी,
आनन्द-ज्योति अति प्यारी ?
(२)
आश्चर्य—भाव में भूले,
अनुराग-बाग के माली,
क्यों ध्यान-मग्न तुम बैठे,
भरकर फूलों से डाली।
(३)
आकाश ओम् से झंकृत,
अलि-दल पराग-रस पीता;
है गूँज रही त्रिभुवन में,
ऋषिराज ! तुम्हारी गीता
(४)
सुन्दर फूलों की फुहियाँ,
झर-झर तुम पर झरती हैं;
नतमस्तक वृक्ष खड़े हैं,
पत्तियाँ पवन करती हैं।
(५)
यह भक्ति, मुक्ति की पूजा !
हैं सूर्य-चन्द्रमा किंकर,
आरती प्रकृति करती है,
गो—धूली-रूप धारण कर।
(६)
हैं खेल रहे बालक सा,
मृग-शिशु विनोद-खिलौना;

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

आकाश श्वेत अम्बर है,
दूर्वा-दल दिव्य बिछौना।

(७)

फिर जटा-जाल फैला कर,
भगावन, भक्त हुलसाओ;
हम लोट रहे चरणों पर,
गुरुवर, गुरु मंत्र सुनाओ।

(८)

वह सत्य प्रदीप जला दो,
हो अंत न कविता 'लौ' का;
भिड़ जाय सिन्धु के तट पर,
कवि की सोने की नौका।

पं० सुमित्रानन्दन पन्त

आँसू

कल्पना में है कसकती वेदना।
अश्रु में जीता सिसकता गान है;
शून्य आहों में सुरीले छन्द हैं,
मधुर लय का क्या कहीं अवसान है।
वियोगी होगा पहिला कवि,
आह से उपजा होगा गान;
उमड़ कर आँखों से चुपचाप,
वही होगी कविता आनजान॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हाय ! किस के उर में,
उतारूँ अपने उर का भार !
किसे अब दूँ उपहार,
गूँथ यह अश्रुकणों का हार !!

मेरा पावस ऋतु-सा जीवन,
मानस-सा उमड़ा अपार मन;
गहरे, धुँधले, धुले, साँवले,
मेघों से मेरे भरे नयन।

इन्द्रधनु-सा आशा का सेतु,
अनिल में अटका कभी अछोर;
कभी कुहरे सी धूमिल, घोर,
दीखती भावी चारों ओर !

तड़ित-सा सुमुखि तुम्हारा ध्यान,
प्रभा के पलक मार, उर चीर,
गूढ़ गर्जन कर जब गंभीर,
मुझे करता है अधिक अधीर।

जुगनुओं में उड़ मेरे प्राण,
खोजते हैं तब तुम्हें निदान !

\+ + +

देखता हूँ जब उपवन,
पियालों में फूलों के
प्रिये ! भर भर अपना यौवन,
पिलाता है मधुकर को ॥

\+ + +

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

देखता हूँ, जब पतला,
इन्द्र धनुष-सा हलका।
रेशमी घूँघट बादल का,
खोलती है कुसुम-कला॥

तुम्हारे ही मुख का तो ध्यान,
मुझे करता तब अन्तर्धान।
न जाने तुम से मेरे प्राण,
चाहते हैं क्या आदान।

सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

भर देते हो

भर देते हो—
बार-बार प्रिय, करुणा की किरणों से,
क्षुब्ध हृदय को पुलकित कर देते हो।
मेरे अन्तर में आते हो देव निरन्तर,
कर जाते हो व्यथा-भार लघु,
बार बार कर कंज बढ़ाकर;
अन्धकार में मेरा रोदन
सिक्त धरा के अंचल को।
करता है क्षण क्षण—
कुसुम-कपोलों पर वे लोल शिशिर-कण;

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तुम किरणों से अश्रु पोंछ लेते हो;
नव प्रभात जीवन में भर देते हो।

पहचाना

पहचाना अब पहचाना—
हाँ, उस कानन में खिले हुए तुम
चूम रहे थे झूम-झूम
ऊषा के स्वर्ण कपोल,
अठखेलियां तुम्हारी प्यारी-प्यारी,—
व्यक्त इशारे से ही सारे बोल मधुर अनमोल।
सजे-बजे करते थे सबका स्वागत,
घूँघट का पट खोल दिखाते उसे प्रकृति का मुखड़ा,
जिसे समझते थे अभ्यागत।
तुम्हारा इतना हृदय उदार
व, क्या समझेगा माली निष्ठुर—
निरा गँवार—
स्वार्थ का मारा यहाँ भटकता—
फूटी कौड़ी पर विनोदमय जीवन सदा पटकता—
तोड़ लिया लचकाई ज्योंही डाली,
पत्थर से भी कठिन कलेजे का है,
चला गया जो वह हत्यारा माली।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

भिक्षुक

वह आता—
दो टूक कलेजे के करता पछताता पथ पर आता।
पेट पीठ दोनों मिलकर हैं एक,
चल रहा लकुटिया टेक,
मुट्ठी भर दाने को, भूख मिटाने को
मुँह फटी पुरानी झोली का फैलाता—
दो टूक कलेजे के करता पछताता पथ पर आता ॥
साथ दो बच्चे भी हैं सदा हाथ फैलाए,
बाएँ से वे मलते हुए पेट को चलते,
और दाहिना दया-दृष्टि पाने की ओर बढ़ाए।
भूख से सूख ओंठ जब जाते,
दाता-भाग्य-विधाता से क्या पाते?—
घूँट आँसुओं के पीकर रह जाते।
चाट रहे जूठी पत्तल वे कभी सड़क पर खड़े हुए,
और झपट लेने को उनसे कुत्ते भी हैं अड़े हुए।
ठहरो अहा मेरे हृदय में है अमृत, मैं सींच दूँगा,
अभिमन्यु जैसे हो सकोगे तुम
तुम्हारे दुःख मैं अपने हृदय में खींच लूँगा।

SPS
891.431 A 97 S
0016
Sri Pratap Singh Public Library Srinagar
CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE